चन्दामामा
मार्च १९६७
75 P

Chandamama
Press
VADAPALANI
MADRAS 26
OFFERS YOU...
FINEST PRINTING.-
Equipped with
PHOTO GRAVURE
KLIMSCH CAMERA
VARIO KLISCHOGRAPH-
-BLOCK MAKING
and a
host of Others....

चाँद उगा है, फूल खिला है
कदम गाछ तर कौन ?
नाच रहे हैं हाथी-घोड़े
ब्याह करेगा कौन ?

ताँती के घर बेंग बसा है
ढोंसा को है तोन्द !
खाता-पीता मौज उड़ाता
गाना गाता कौन ?

हँसी के इस फुहारे को छोड़ते ही करोड़ों-करोड़ शिशुओं के खिलखिलाते प्रफुल्लित चेहरे नजर के सामने उभर आते हैं।

प्रगतिशील भारत में शिशुओं के स्वास्थ्य को आकर्षक बनाये रखने के लिये 'डाबर' ने तरह-तरह के प्रयोग एवं परीक्षण के बाद—'डाबर जन्म-घूँटी' का निर्माण किया है।

डाबर जन्मघूँटी

शिशुओं के सभी प्रकार के रोगों में व्यवहार की जाती है।

डाबर (डा. एस. के. बर्म्मन) प्रा. लि., कलकत्ता-२६

मार्च १९६७

विषय - सूची

★

एक प्रति ०-७५ पैसे

वार्षिक चन्दा रु. ८-४० पैसे

शक्ति और उत्साह के लिये!
दूध
कोको
शक्कर
माल्ट
Bournvita
THE IDEAL FOOD DRINK FOR STRENGTH AND VIGOUR
कॅडबरिज़
बोर्नविटा
बोर्नविटा में कई पौष्टिक पदार्थ सम्मिश्रित हैं। इससे मांसपेशियों और स्नायु-तन्तुओं के विकास के लिये प्रोटीन मिलता है, शक्ति और उत्साह के लिये कार्बोहाईड्रेट, हड्डियों को मज़बूत रखने के लिये खनिजलवण और स्वास्थ्य के लिये आवश्यक विटामिन मिलते हैं। आसानी से बनाया जा सकने वाला बोर्नविटा स्वादिष्ट भी होता है।

मुक़ाबिले के लिये तैयार

सम्पूर्ण सुरक्षा। सर पर लोहे का टोप, तन पर फ़ौलादी कवच, और दाँतों में फ़्लोराइड की ताक़त।

फ़्लोराइड दाँतों में पहुँच कर उन्हें मज़बूत बनाता है—उनमें सड़न से सुरक्षित रहने की ताक़त बढ़ाता है। फ़्लोराइड की यह सुरक्षा अपने दाँतों को दीजिए।

बिनाका फ़्लोराइड टूथपेस्ट से प्रतिदिन मंजन कीजिये।

Binaca Fluoride toothpaste

दंत-रोग का मुक़ाबिला करता है

डेडी, आप क्या लिख रहे हैं ?
चैंक है, बेटा।
चेक क्या होता है ?
यह बैंक के नाम आदेश है कि अमुख व्यक्ति को रुपया दे दो। मुझे कुछ किताबें खरीदनी हैं। दुकानदार को रुपये की बजाय चैंक ही भेज दूंगा। वह इसे अपनी बैंक में जमा करा देगा। उसकी बैंक इसे हमारी बैंक से भुना लेगी। चैंक रुपये का काम करेगा। और यह तरीका सुरक्षित भी है। चैंक रुपया केवल उस दुकानदार को ही मिलेगा। चैंक खो भी जाय, फिर भी हमारा रुपया सुरक्षित है। है न, आश्चर्य की बात।
ठीक है, डैडी। आपका खाता तो पंजाब नैशनल बैंक में ही है न।
हाँ, बेटा। वही मेरा बैंक है। यह देश के सबसे पुराने और सबसे बड़े बैंकों में से एक है। देश भर में इसकी ४७५ से अधिक शाखाएं हैं।

पंजाब नेशनल बैंक

PR.PNB.4624-1

डैडी,
आप क्या लिख
रहे हैं ?

सारे परिवार के स्वास्थ्य के लिए—फ़ॉसफ़ोमिन®

फ़ॉसफ़ोमिन-फलों के ज़ायकेवाला, हरे रंग का विटामिन टॉनिक है। इसमें विटामिन 'बी' कॉम्प्लेक्स है, साथ ही कई तरह के ग्लिसियरो-फ़ॉस्फेट भी हैं...जिनके कारण आपका परिवार शक्तिशाली, प्रफुल्लित और निरोग रहता है। फ़ॉसफ़ोमिन घर में रखिए। फ़ॉसफ़ोमिन के सेवन से थकावट और कमज़ोरी नही रहती। फ़ॉसफ़ोमिन लेने से खोयी हुई ताक़त लौट आती है, भूख फिर से लगने लगती है; अधिक काम करने की क्षमता बढ़ती है और शरीर की रोग प्रतिरोध-क्षमता अधिक होती है। सारे परिवार के स्वास्थ्य का रहस्य—फ़ॉसफ़ोमिन।

SQUIBB®

® ई. आर. स्क्विब एण्ड सन्स इन्कार्पोरेटेड का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है। करमचन्द प्रेमचन्द प्राइवेट लि. को इसे उपयोग करने का लायसेन्स प्राप्त है।

SARABHAI CHEMICALS

Shilpi SC 28 A.Hin

मुन्नू बदल गया

क्या घर में नहीं है? बहन मुन्नू तो घर सर पर उठाये रखता है

खेल रहा है। अब वह पहले जैसा मुन्नू नहीं रहा

भई वाह मुन्नू बेटा तो बड़े अच्छे खिलौने बना रहा है। यह मिट्टी कैसी है?

यह मिट्टी नहीं है यह नुसेकोस प्लास्टिकले है। अब से यह लाई हूँ मुन्नू बिलकुल बदल गया है- काम में व खेल में बहुत मन लगाता है।

मैं आज ही अपनी शीला को भी यह लादूँगी

नुसेकोस प्लास्टिकले

बच्चों के लिये एक खिलौने बनाने का अदभुत रंग बिरंगा मसाला जो बार-बार काम में लाया जा सकता है। १२ आकर्षक रंगों में सर्वत्र प्राप्त है।

नर्सरी स्कूल व होम इक्विपमैन्ट कम्पनी
पोस्ट बाक्स नं १४१६, दिल्ली-६

गेवर्ट
गेवाबॉक्स ही लीजिये
गेवाबॉक्स
५०% बड़ी और बढ़िया तस्वीरें उतारता है!

गेवाबॉक्स बढ़िया और चौरस तस्वीरें उतारता है—६ सी एम × ९ सी एम जितनी बड़ी ...साधारण कैमरों से उतारी गई तस्वीरों से ५०% बड़ी। और नैगेटिव की क्वालिटी विशेष रूप से अच्छी होने के कारण एन्लार्जमैन्ट भी बहुत ही अच्छे बनते हैं!

इन उल्लेखनीय विशेषताओं के कारण **गेवाबॉक्स** सबसे बढ़िया कैमरा माना जाता है—

- **मज़बूत, आकर्षक बॉडी, बढ़िया इस्पात से बनाई जाती है।**
- **चमकदार, साफ़ आइ-लैवल व्यू फ़ाइन्डर के कारण मनचाही 'कम्पोज़ीशन,' तस्वीरें जल्दी और आसानी से खींची जा सकती हैं।**
- **३ स्पीड (बल्ब, १/५० वाँ और १/१०० वाँ सैकन्ड) अचूक 'फ़ास्ट-एक्शन' की तस्वीर ली जा सकती हैं।**
- **२ एपर्चर (एफ़ ११ और एफ़ १६)-किसी भी वस्तु गहराई की सही 'फ़ोकसिंग' होती है।**

और इसके अतिरिक्त इसको चलाना सबसे ही आसान काम है। आप सिर्फ़ 'क्लिक' कीजिये, बाक़ी का काम **गेवाबॉक्स** खुद कर लेगा। अपने डीलर से इसको चलाकर दिखाने के लिये कहिये। मूल्य: रु. ४४.००

गेवर्ट
गेवाबॉक्स

एग्फ़ा—गेवर्ट इंडिया लिमिटेड।
कस्तूरी बिल्डिंग, जमशेदजी टाटा रोड,
बम्बई १.

Bensons/1-AGIL-1 Hin
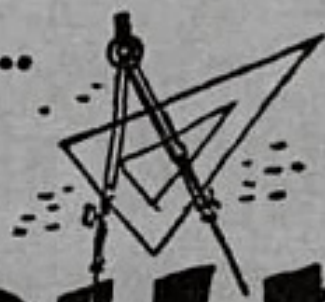
...Its B. N. K's., superb printing that makes all the difference. Its printing experience of over 30 years is at the back of this press superbly equipped with modern machineries and technicians of highest calibre.

B.N.K. *PRESS PRIVATE LIMITED.*

CHANDAMAMA BUILDINGS,

MADRAS-26

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8 (Form IV), Newspapers (Central) Rules, 1956

1.	*Place of Publication*	:	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
2.	*Periodicity of Publication*	:	MONTHLY 1st of each Calendar month
3.	*Printer's Name*	:	B. V. REDDI,
	Nationality	:	INDIAN
	Address	:	Prasad Process (Pvt.) Ltd., 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
4.	*Publisher's Name*	:	B. VISWANATHA REDDI,
	Nationality	:	INDIAN
	Address	:	Managing Partner, Sarada Binding Works 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
5.	*Editor's Name*	:	CHAKRAPANI (A. V. Subba Rao)
	Nationality	:	INDIAN
	Address	:	2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26.
6.	*Name & Address of individuals who own the paper*	:	SARADA BINDING WORKS: PARTNERS, 1. Sri. B. Viswanatha Reddi, 2. Sri. B. L. N. Prasad, 3. Sri. B. Venugopal Reddi, 4. Sri. B. Venkatarama Reddi, 5. Smt. B. Seshamma, 6. Smt. B. Rajani Saraswathi, 7. Smt. A. Jayalakshmi, 8. Smt. K. Sarada.

I, B. Viswanatha Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

1st March, 1967

B. VISWANATHA REDDI,
Signature of the Publisher

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
हिन्दू समाज के आधारभूत धार्मिक ग्रन्थ हैं...वेद। ये चार हैं, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, और अथर्ववेद। इनको भगवद्दत्त माना जाता है।
वेद ज्ञान राशि हैं और ज्ञान अनन्त है और आयु सीमित है।
वेदों के बारे में, इस अंक में एक कहानी है..."आजीवन दीक्षा—" जो यह सत्य निरूपित करती है।
वर्ष: १८ मार्च १९६७ अंक: ७
CHITRA

भारत का इतिहास

१५ वीं सदी के अन्त में पाश्चात्य लोगों के भौगोलिक अन्वेषणों के कारण भिन्न भिन्न देशों के बीच नये व्यापारिक सम्बन्ध बने और उन देशों के इतिहास में नये अध्याय प्रारम्भ हुए। इस तरह के परिवर्तन के आधार में मुख्य घटना थी, वास्को डि गामा का भारत आना। मई २७, १४९८ में कालीकट के बन्दरगाह में उसने प्रवेश किया।

विदेशियों के हमारे देश में आने के लिए दो मार्ग हैं। एक उत्तर पश्चिम के सीमा प्रान्त का मार्ग और दूसरा समुद्र का मार्ग।

मुगलों ने स्थल मार्ग की तो पूरी रक्षा की, पर समुद्र मार्ग के संरक्षण की ओर उन्होंने कोई ध्यान न दिया कभी भी उन्होंने समुद्र के आधिपत्य का प्रयत्न न किया। समुद्र की रक्षा करने का प्रयत्न मराठों ने ही किया।

वास्कोडिगामा पोर्चुगीज नाविक था। वह लिस्बन से निकलकर, अफ्रीका का चक्कर लगाकर भारत आया था। जामूरिन की उपाधिवाले, कालीकट के शासक ने उसके प्रति स्नेह भाव दिखाया। उसके आने के कारण पोर्चुगाल और भारत में व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हुए।

सच कहा जाये तो उससे पहिले भी पाश्चात्य देश और भारत के बीच माल आता जाता रहता था। परन्तु सातवीं सदी से यह व्यापार अरबों के हाथ था। हिन्दु महासमुद्र और लाल सागर में व्यापार के मार्गों का उपयोग पोर्चुगीज व्यापारी करने लगे।

९ मार्च, १५०० फिड्रो अल्वरेज काब्रल नाम का पोर्चुगीज़ नौकाधिपति १३ नौकाओं को साथ लेकर लिस्बन से भारत निकला। ये व्यापारी अपने व्यापार की इतनी परवाह न करके, व्यापार के भागों को हस्तगत करने के दुरुद्देश्य से दूसरे देशों की नौकाओं को तंग करने लगे।

कालीकट का शासक, जो तब तक अरबों के व्यापार से फायदा उठाता था, इस कारण पोर्चुगीज़ों का शत्रु हो गया। पोर्चुगीज़ों ने कालीकट के शत्रु, कोचीन के शासक से मैत्री करके दक्षिण भारत की राजनैतिक दाँव पेंचों में दखल दिया।

भारत देश में पोर्चुगीज़ों के आधिपत्य को स्थिर करनेवाला अल्फान्जो डी अल्बुकर्क था। यह पहिले पहल १५०३ में, एक नौका दल के नायक के रूप में आया। फिर उसने अधिकारियों को इस प्रकार खुश किया कि १५०९ में उसे पोर्चुगीज़ गवर्नर नियुक्त किया गया।

भारत में वह पोर्चुगीज़ों के काम देखने लगा। बीजापुर की सल्तनत के अन्तर्गत गोवा को उसने ले लिया। यह एक सुन्दर सम्पन्न बन्दरगाह है। अल्फान्जो के समय में गोवा नगर की रक्षा प्रबन्ध सुदृढ़ किये गये। उसका व्यापार भी बढ़ा।
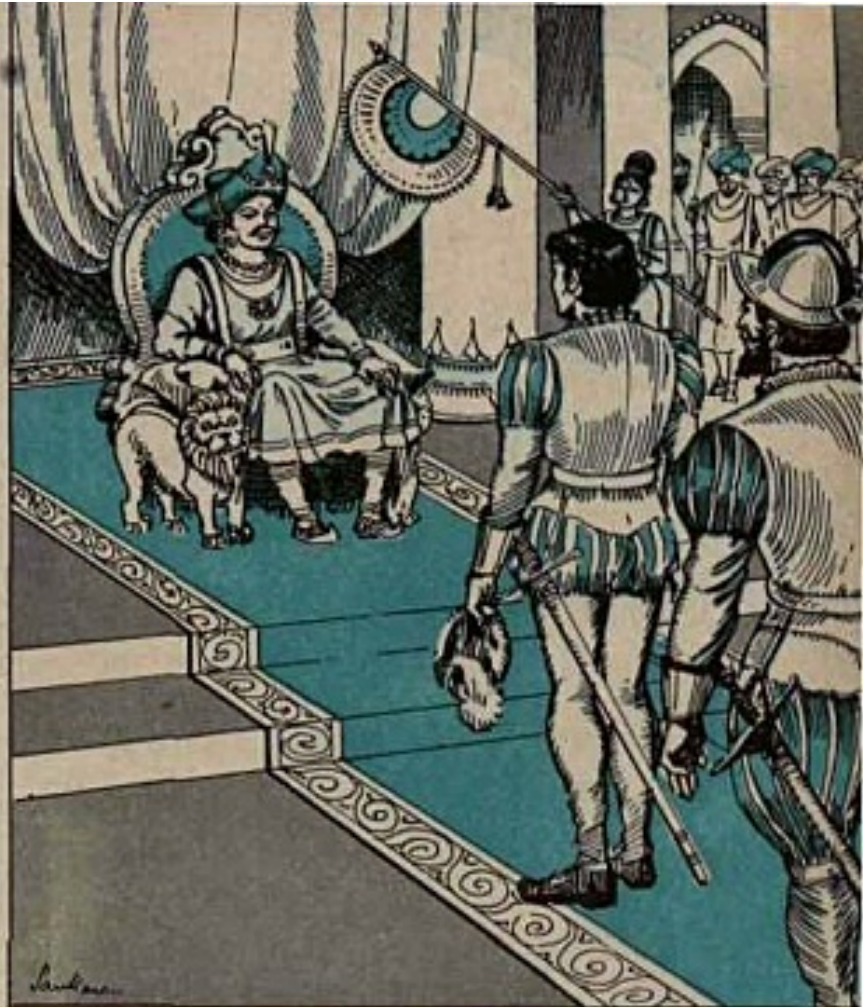
भारत देश में पोर्चुगीज़ों की संख्या बढ़ाने के उद्देश्य से इसने अपने देशवासियों को भारतीय स्त्रियों से विवाह करने के लिए प्रोत्साहित किया। यह यद्यपि मुसलमानों के प्रति कड़ा था, पर अपनी जातिवालों का इसने बड़ा उपकार किया। १५१५ में जब इसकी मृत्यु हुई तो 'नौकाबल में पोर्चुगाल का मुकाबला करनेवाला भारत में

कोई न था। सारा भारतीय पश्चिमी तट उनके अधिकार में था।

अल्बुकर्क के बाद जो आये, वे समुद्र तट पर एक एक नगर स्थापित करते गये। दियू, दमान, सल्सेट, बसीन, चौल, बम्बई, मद्रास के पास शान्तोम, बंगाल में हुगली, इसी तरह के नगर हैं। पोर्चुगीज़ों का बोलबाला लंका में भी बढ़ा। परन्तु बाद में ये सब प्रदेश उनके हाथ से निकल गये। दियू, दमान और गोवा ही बहुत समय तक उनके आधीन रहे। और अन्त में १९६३ में वे स्वतन्त्र भारत में मिला दिये गये।

भारत के व्यापार से पोर्चुगीज़ों का बड़ा फायदा हुआ। यह देख कई पाश्चात्य देशों में ईस्ट इन्डिया कम्पनियाँ स्थापित की गईं। इन्गलेन्ड में १६०० में स्थापित कम्पनी ने "पूर्व" समुद्रों में व्यापार करने का अधिकार राजा से प्राप्त किया। १६०२ में डच ईस्ट इन्डिया कम्पनी को व्यापार करने का अधिकार तो दिया गया, साथ साथ उस प्रदेश में किले बनाने का और वहाँ शासन करने का अधिकार भी उनको दिया गया। १६१६ में डेनमार्क वाले आये। १६६४ में बने फ्रेन्च ईस्ट इन्डिया कम्पनी का राजनीति में काफी स्थान रहा। इस प्रकार और भी ईस्ट इन्डिया कम्पनियाँ थीं।

इन सब के बीच होड़ भी बढ़ने लगी। १७ सदी के पूर्वार्ध में पोर्चुगीज़, डच, अंग्रेज़ों में कई बार झगड़े भी हुए। इन झगड़ों में पोर्चुगीज़ विजयी न रह सके। उनका दबदबा, १८ वीं सदी तक बहुत कम हो गया था।
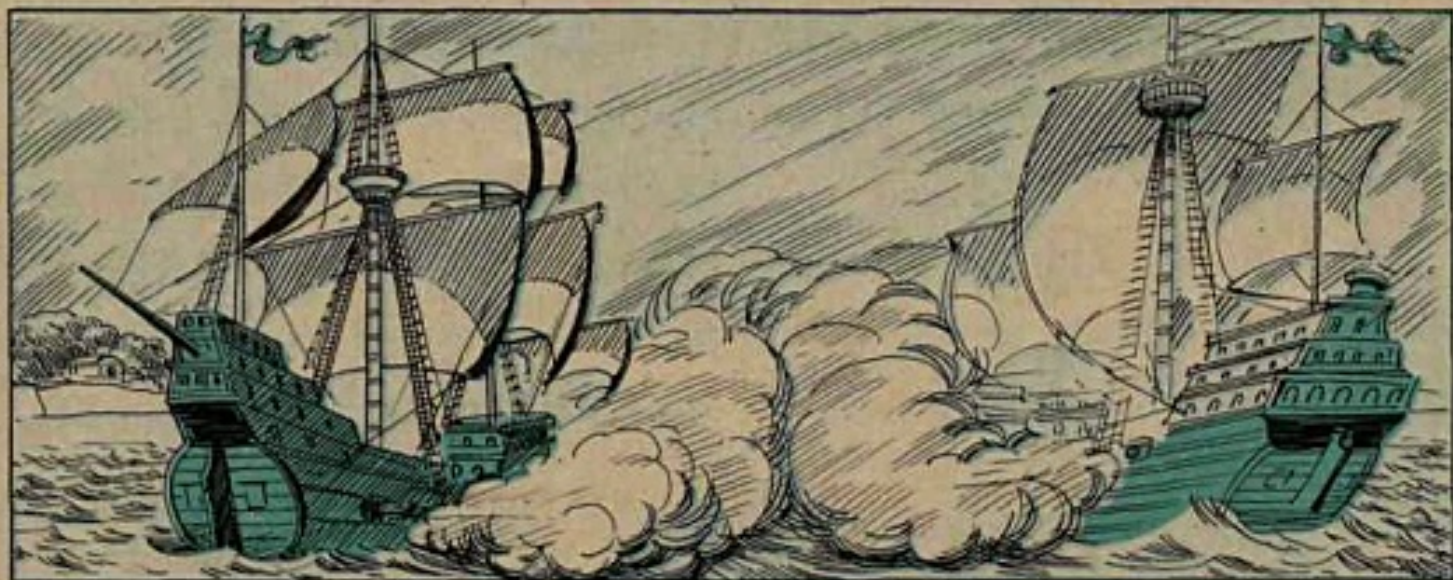
नेहरू की कथा

[३२]

मोतीलाल और जवाहरलाल ने जयकर के साथ दो दिन तक बातचीत की। पर उससे कोई खास फायदा न हुआ। होने की उमीद भी न थी। सप्रू और जयकर के ख्याल, मोतीलालजी और जवाहरलालजी के ख्यालों से मेल नहीं खाते थे। सरकार और काँग्रेस में कोई समझौता हो सकेगा, इसकी उमीद न मोतीलालजी को थी, न जवाहरलालजी को ही। यही नहीं, वे बिना गान्धीजी के परामर्श के और कार्यकारिणी के अन्य सदस्यों के अनुमति के कोई घोषणा नहीं करना चाहते थे। यह बात उन्होने गान्धीजी को लिखी भी।

८ अगस्त को सप्रू, वायसराय से एक चिट्ठी लेकर फिर नैनी जेल आये। उस चिट्ठी का सारांश यह था कि वे यरवदा जेल में गान्धीजी से तो मिल सकते थे, पर जेल के बाहर सरदार पटेल, मौलाना आजाद से मिलने की अनुमति न थी।
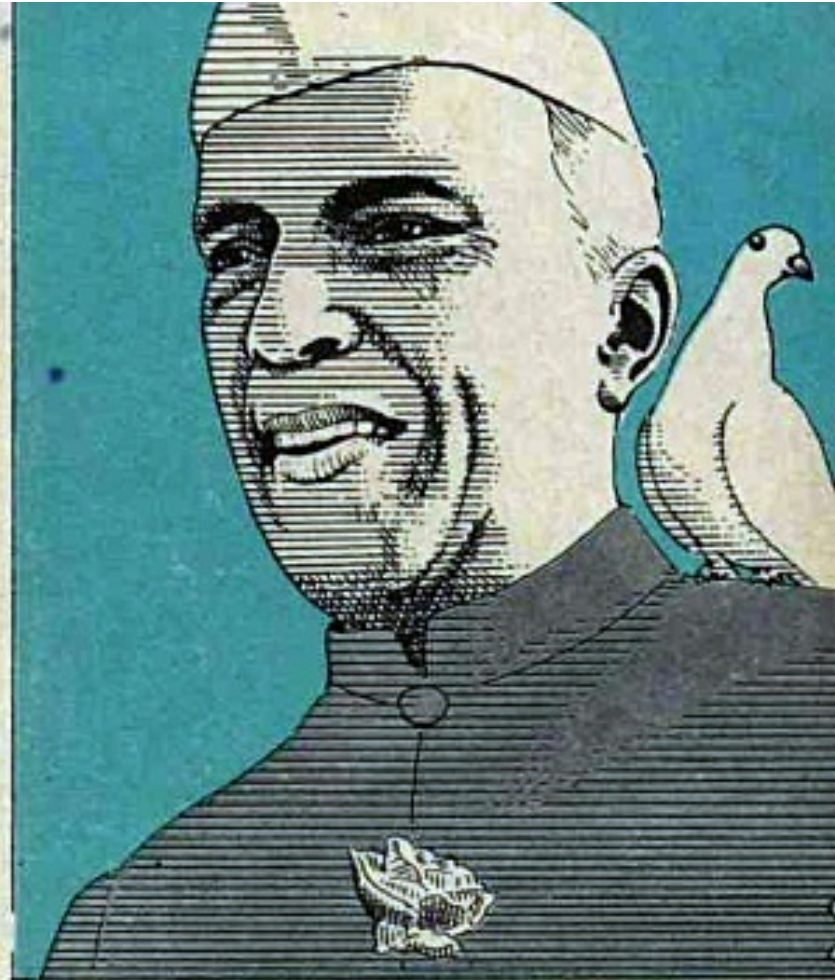
"इन शर्तों को मानकर क्या आप यरवदा जेल जायेंगे?" सप्रू ने पूछा।

"गान्धीजी को देखने के लिए हमेशा तैयार हैं परन्तु साथ के अन्य कार्यकर्ताओं से मिले बगैर हम कोई अन्तिम निर्णय नहीं दे सकते हैं।" जवाहरजी और उनके पिता ने कहा।

यही नहीं, इसके कुछ दिन पूर्व ही बम्बई में बड़ा जबर्दस्त लाठी चार्ज हुआ था। मालवीय और पटेल आदि कार्यकारिणी के सदस्य गिरफ्तार कर लिये गये थे। इसके कारण परिस्थिति और विषम थी, सुलझी नहीं थी।

भीड़ थी, उन स्टेशनों पर भी, जहाँ गाड़ी रुकनी थी और वहाँ भी जहाँ नहीं रुकनी थी।

११ अगस्त को, गाड़ी खिड़की (पूना के पास) स्टेशन पहुँची। जवाहरलाल आदि सोच रहे थे कि जल्दी ही उन्हें गान्धीजी के पास ले जाया जायेगा। यरवदा जेल के सुपरिन्टेन्डेन्ट ने यही इन्तज़ाम किया था। परन्तु ऐसा न हुआ। उनके साथ नैनी से आये हुए पोलीस के कर्मचारियों ने यह व्यवस्था बदल दी। इसका कारण यह था कि यदि मोतीलाल आदि को बिना सप्रू और जयकर की उपस्थिति के बातचीत करने दिया गया तो मामला और बिगड़ सकता था, वे आपस में कुछ और सलाह मशवरा कर सकते थे। इसलिए यरवदा जेल के अधिकारियों ने जवाहर और उनके साथ आये हुए और लोगों को जेल के एक और भाग में उस दिन रात को और अगले दिन और अगली रात को रखा। मोतीलालजी को बड़ा गुस्सा आया। नैनी से वे गान्धीजी से मिलने आये थे, और उनसे न मिल पाना उनके लिए दुस्सह हो रहा था।

"फिर भी गान्धीजी से मिलने में क्या हर्ज है?" सप्रूजी ने पूछा।

"सय्यद मोहमूद कॉंग्रेस के मन्त्री हैं। वे भी हमारे साथ आयेंगे।" मोतीलालजी और जवाहरलालजी ने कहा।

१० अगस्त को मोतीलाल, महमूद और जवाहर नैनी से एक विशेष रेलगाड़ी में पूना के लिए निकले। यह गाड़ी बड़े बड़े स्टेशनों पर न रुककर, छोटे छोटे स्टेशनों पर रुकती गई। परन्तु इनकी यात्रा के बारे में पहिले ही लोगों को मालूम हो गया था, इसलिए सभी जगह

१३ तारीख शाम को जेल के दफ्तर ले जाया गया। वहाँ नेहरू और जयकर आये हुए थे। कहा गया कि गान्धीजी भी आये हुए थे। मोतीलालजी ने कहा वे नहीं जायेंगे। जेल अधिकारियों के समझाने बुझाने पर, माफी माँगने पर और उनकी यह शर्त मान लिए जाने पर कि गान्धीजी से उनको अकेला एक घंटा बात करने दिया जाये, तो वे वहाँ जाने लिए राजी हो गये। वल्लभ भाई पटेल, जयराम दास दौलत राम भी यरवदा जेल में ही थे। सरोजिनी नायडु स्त्रियों की जेल में थीं। इनको भी जेल के अधिकारियों ने बातचीत में भाग लेने दिया।

मोतीलाल, जवाहर, मोहम्मद को गान्धीजी के साथ रखा गया। सरदार पटेल और दौलतरामजी तात्कालिक रूप से वहाँ रखे गये। इन सब ने सप्रू और जयकर से तीन दिन तक बातचीत की (१३, १४, १५ अगस्त) उन्होंने अपने अभिमत व्यक्त किये। और वे सरकार से किन शर्तों पर समझौते कर सकते थे, उन्हें लिखकर दिया। उनकी ये बातें पत्र पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुईं।

इन बातचीतों के कारण १६ तारीख को मोतीलालजी को तेज बुखार आया। वे अपने साथियों के साथ १९ तक नैनी वापिस न जा सके। वे वापिस भी विशेष गाड़ी से उसी तरह गये, जिस तरह आये थे। इस बार भीड़ और भी बड़ी थी।

मोतीलाल की तन्दुरुस्ती बिगड़ती जाती थी। उनके ईलाज़ के लिए उनके अपने डाक्टरों के अलावा सरकारी डाक्टर भी आये। जेल में उनकी ठीक चिकित्सा नहीं हो सकती थी, पर जब उनके मित्रों ने यह सुझाव दिया कि उनको जेल से छोड़ दिया जाये तो वे क्रुद्ध हुए। उन्होंने लार्ड इर्विन को तार भी भेजी कि उनको रिहा करने की कोई ज़रूरत न थी। परन्तु उनकी हालत बिगड़ती जाती थी। वे बिल्कुल सूख से गये थे। कमजोर हो गये थे। ८ सितम्बर को उन्हें छोड़ दिया गया। जेल में उन्होंने दस सप्ताह काटे थे।

उनकी रिहाई के बाद जवाहरलालजी के लिए जेल निर्जीव सी हो उठी। जवाहरलाल के साथ महमूद, मोतीलालजी की दिन भर कोई न कोई सेवा किया करते थे। इस काम में जवाहर इतने लगे रहते कि उन्होंने पढ़ना, नवार बुनना या कातना भी छोड़ दिया था। मोतीलालजी के चले जाने के बाद बाकी लोग अपना काम यथापूर्व करने लगे। पर उनको उन कामों में कोई आनन्द न आ रहा था। मोतीलालजी के चले जाने के बाद दैनिक पत्रिकाओं का आना बन्द हो गया। इतने में श्री रणजीत पंडित गिरफ्तार होकर उनके साथ आ मिले।

पाताल दुर्ग

[५०]

[धूमक और सोमक की विरूप नाम के जंगली से दोस्ती हो गई, उसके साथ वे एक नदी तक गये। वहाँ उनका एक भील सरदार से परिचय हुआ। वे नावों पर नदी पार कर रहे थे कि एक बड़ा गरुड़ पक्षी आया और मन्त्रदण्ड को लेकर आकाश में उड़ा। विरूप ने एक रस्सी में फन्दा बनाकर गरुड़ की ओर फेंका। उसके बाद—]

विरूप का फेंका हुआ फन्दा गरुड़ पक्षी के एक डैने में फँस गया। यह मौका देख विरूप ने जोर से रस्सी खींची। चूँकि पक्षी तेज़ी से उड़ा जा रहा था, इसलिए फन्दा और कसता गया। गरुड़ एक क्षण के लिए स्तम्भित-सा रहा। फिर जोर से चीखा, फिर पंख फड़फड़ाकर उसने उड़ने की कोशिश की। विरूप स्वयं तो रस्सी खींचता ही जाता था, उसने चप्पू चलानेवाले भीलों से भी उसे खींचने के लिए कहा।

"विरूप, रस्सी मत छोड़ो, मैं आ रहा हूँ।" कहता सोमक जोर से चिलाया, अपनी नाव में उसकी नाव के पास गया। तब तक गरुड़ पक्षी भी ढीला पड़ गया था। जब तीन बलवान लोगों ने उसे

खींचना शुरु किया, तो वह एक तरफ़ झुक गया और छटपटाने लगा। धूमक ने तलवार निकालकर, पक्षी के गले का निशाना बनाकर उसे छोड़ा। वह निशाने पर न लगकर उसकी छाती पर लगा। उसके कारण वह मन्त्रदण्ड को छोड़कर नदी में गिरकर तड़पने लगा।

सोमक बड़ा खुश हुआ। "धूमक, कोई डर नहीं, मैं नाव ला रहा हूँ।" वह जोर से चिल्लाया और नाव को धूमक की ओर ले जाने लगा। इस बीच विरूप की नाव में खड़े घोड़े यूँ बिदके और नाव के एक ओर चले गये कि वह उलट गयी और वे पानी में जा गिरे। उनके साथ विरूप और दो भील भी जा गिरे। वे दोनों यद्यपि तैरना जानते थे, पर बहाव इतना तेज़ था कि वे यूँ चिल्लाये, जैसे वे डूब रहे हों। विरूप ने दो हाथ मारे और बहती नाव को पकड़ लिया। "अरे, हमने न सोचा था कि ये भील इतने डरपोक हैं, आओ चढ़ो नाव पर।" फिर उसने कहा—"सोमक बाबू, आप धूमक बाबू के पास जाइये। मैं तैर सकता हूँ। जिसके कारण इतनी मुसीबत आई है, उस गरुड़ को फन्दे से न निकलने देंगे। जब तक मैं उसका दिल भूनकर न खा जाऊँगा, तब तक मुझे चैन न मिलेगी।" वह उसकी ओर तैरने लगा।

सोमक जब अपनी नाव लेकर धूमक के पास गया, तो वह उसे पकड़कर अन्दर जा बैठा। भील भी अपनी नाव में सवार होकर उसे विरूप की ओर ले जाने लगे। इस बीच विरूप जब गरुड़ के पास पहुँचा, तो उसने अपने पैरों से विरूप को जोर से मारा। जब उसके नाखून विरूप के शरीर पर लगे, तो उसने आगे पीछे न

CHITRA

पकड़ने की कोशिश कर रहा था। नाव के पास पहुँचते ही धूमक ने कहा—"विरूप तुम नाव पर आओ। जो पक्षी फन्दे में फँस गया है, वह चला कहाँ जायेगा!" उसने कन्धे पकड़कर उसको जबर्दस्ती नाव में खींच लिया। विरूप के शरीर पर कई जगह नाखून लगे हुए थे। धूमक और सोमक ने मिलकर गरुड़ को भी नाव पर खींच लिया।

"यह गरुड़ पक्षी नहीं है। कोई राक्षस है।" सोमक ने पक्षी की ओर तलवार घुमाते हुए कहा।

"हुज़ूर, इससे भी भयंकर पक्षी इन पहाड़ों में हैं। हम कभी कभी इन्हें फन्दों में डालकर पकड़ते रहते हैं। सिखाने पर इनसे काफी मदद भी मिल सकती है।" विरूप ने गरुड़ पक्षी की ओर प्रेम से देखते हुए कहा।

धूमक यह सुनकर ज़ोर से हँसा। उसने कहा—"फिर तुम्हारी कसम का क्या हुआ? तुम तो कह रहे थे कि इसका दिल भूनकर खा जाओगे? अपना जिस्म तो देखो, कितने घाव लगे हैं, किस तरह खून बह रहा है।"

देखा और उससे भिड़ गया। आकाश में उड़नेवाले पक्षी और भूमि पर चलनेवाले मनुष्य को पानी में मछलियों की तरह लड़ता देख, धूमक और सोमक को बड़ा आश्चर्य हुआ।

"अगर किसी मगर ने देख लिया, तो दोनों को निगलकर अपने गढ़े में चला जायेगा। नावों को जल्दी विरूप की ओर चलाओ।" धूमक ने आज्ञा दी।

जल्दी ही दोनों नावें विरूप के पास पहुँची। तब विरूप उसका गला एक हाथ में पकड़कर, दूसरे हाथ से उसके पैर

विरूप ने अपने घावों को देखकर कहा—"जरा नदी पार करने दो, मैं इन घावों को एक घड़ी में ठीक कर लूँगा।"

इतने में भीलों ने चप्पू चलाकर दोनों नावों को नदी के पार पहुँचा दिया। वे दोनों घोड़े, जो नदी में बह गये थे, किनारे पहुँचकर एक पेड़ के नीचे खड़े खड़े हिनहिना रहे थे। "अच्छा हुआ, दोनों घोड़े जंगल में नहीं भाग गये।" कहता सोमक उनके पास गया, उनकी लगाम पकड़कर वह पास की हरी घास की ओर गया।

विरूप ने गरुड़ को नाव से किनारे पर खींचा। उसकी रस्सी को उसने एक पेड़ से बाँध दिया। अपने घावों को औषधी लगाने के लिए पास के पौधों के पास गया और इस बीच धूमक अपने गीले कपडों को निचोड़कर सुखाने लगा।

पन्द्रह मिनट बीत गये। यकायक विरूप पेडों के पीछे से "बाबू बाबू, आफत आ गई।" कहता एक खड़ाऊँ हाथ में लेकर धूमक के पास भागा भागा आया।

"यह कालशम्बर मान्त्रिक की खड़ाऊँ है न? हैं न?" धूमक ने पूछा।

"हाँ....बाबू, मै अच्छी तरह जानता हूँ। उस पर जरूर कोई न कोई आफत आई है, आपने कहा था कि कुम्भीर नाम का राक्षस उनका शत्रु था। मुझे सन्देह हो रहा है कहीं उसने मान्त्रिक को मार तो नहीं दिया है?" विरूप ने डरते हुए कहा।

"कालशम्बर इतनी आसानी से मरनेवाला नहीं है! भले ही राक्षस हो, पर कुम्भीर उतना दुष्ट नहीं है। उसकी बात करने का लहजा, व्यवहार मैंने देखा है। पर जरूर मान्त्रिक पर कोई न कोई

आफत आई है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।" धूमक ने कहा।

विरूप कुछ कहना ही चाहता था कि सोमक ने कहा—"धूम, जरा जल्दी इधर तो आओ।" कहता, तलवार निकालकर पौधों की ओर गया। घोड़ों में से एक नथने बड़े करके, पीछे के पैरों पर खड़े होकर सोमक की लगाम से छूटकर भागने की ताक में था।

धूमक और विरूप जल्दी जल्दी सोमक के पास भागे। सोमक ने पौधों को दिखाकर कहा—"उनके पीछे से आहें, कराहट सुनाई पड़ रही हैं। पहिले तो मैंने परवाह नहीं की। पर जब घोड़े ने डर के मारे भागने की कोशिश की, तब मुझे सन्देह हुआ।"

धूमक ने तलवार निकालकर कहा—"जय कालरम्भा, और वह पौधों में जा घुसा। उसके पीछे ही "शाम्भवी" कहता विरूप घुसा। सोमक भी एक और रास्ते से पौधों की ओर चला।"

"अरे भाई, मरे पर क्यों तलवार उठाते हो। मैं राक्षस नहीं हूँ। पर मनुष्य भी नहीं हूँ। कालकली राक्षस के यहाँ पचीस साल काम करने के कारण मुझे ऐसा रूप मिला है, जो न राक्षस का है, न मनुष्य का ही।" ये बातें सुनाई पड़ीं।

उसकी बातें सुनकर तीनों ऐसे रुके, जैसे घबरा गये हों। वे एक एक कदम करके पीछे हटने लगे। धंसी आँखें, गंजा सिर, कहीं कहीं सुओं की तरह खड़े बाल वह मनुष्य बोलता शव-सा लगता था।

"यह खड़ाऊँ किसकी है? यह मन्त्रदण्ड किसका है? ये दोनों कालशम्बर मान्त्रिक

के ही हैं न?" उस विकृत व्यक्ति ने हाँफते हुए पूछा।

"हाँ, कालशम्बर के ही हैं? पर तुम्हें कैसे पता लगा? तुम कौन हो?" धूमक ने पूछा।

"मैं कुछ क्षणों में ही मरनेवाला हूँ। तब तुम जानकर क्या करोगे कि मैं कौन हूँ? कभी मैं इसी प्रदेश का था। मैं कालकलि राक्षस के सेवकों के हाथ पड़ गया और पचीस वर्ष मैं उसकी कैद में रहा। उन्होंने मुझे बड़ा डराया। जान की धमकी दी। जब कभी वे इस प्रान्त के लोगों को उठाकर ले जाना चाहते, तो मुझे साथ लाते क्योंकि मैं इसी प्रान्त का हूँ। मैंने भागने की कोशिश की और उसका नतीजा ये घाव हैं।" कहता वह व्यक्ति आँखें मूँदकर, लम्बी लम्बी साँसें लेने लगा।

धूमक को सन्देह हुआ कि वह काफी देर तक जीता न रहेगा, उसने उसके पास जाकर कहा—"हम उस कालकलि से बदला लेने ही जा रहे हैं। उसे मारकर हम तुम्हारी आत्मा को शान्ति पहुँचायेंगे। पर एक बात बताओ। क्या उसके आदमियों ने कालशम्बर को मरवा दिया है?"
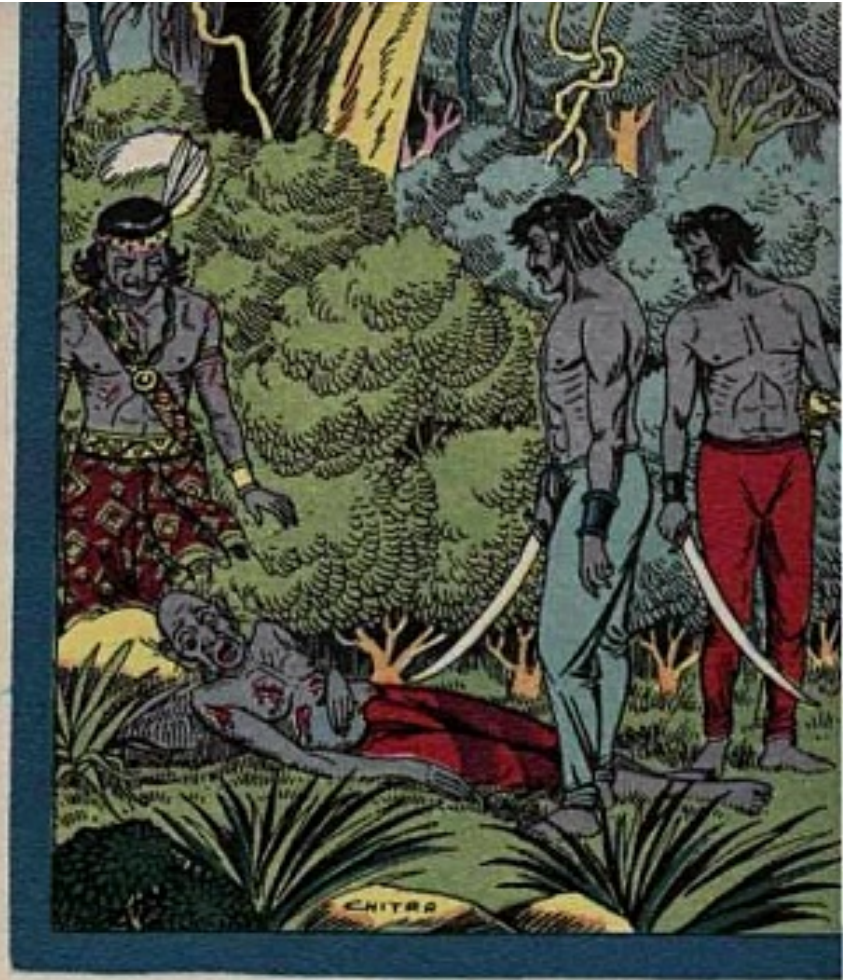
"वह तो मैं साफ साफ नहीं कह सकता, उसने और उसके साथ के युवक ने उस दुष्टों से जमकर लड़ना शुरु किया। उसी गड़बड़ी में मैंने भागने की कोशिश की। मुझे तलवारों से भोंककर वे यहाँ छोड़ गये हैं।" उस विकृत व्यक्ति ने कहा।

"क्या बता सकते हो, वे क्रूर किस तरफ गये हैं?" धूमक ने पूछा।

"नहीं कह सकता। पर वे जिस नाव पर आये थे, वह नाव उस घाट में है,

जहाँ नदी पहाड़ का चक्कर काटती है, जैसा तुमने वचन दिया है, उस कालकलि को मारकर मेरी आत्मा को शान्ति पहुँचाइये।" कहता वह विकृत व्यक्ति जोर से एक बार काँपा। फिर काठ की तरह कस-सा गया।

धूमक ने अपने एक वस्त्र से उसके शरीर को ढक दिया। पीछे मुड़कर पूछा—"क्यों विरूप, जानते हो कहाँ यह नदी पहाड़ के पास मुड़ती है?"

"मालूम है साहब, वह यहाँ से खास दूर नहीं है। चलिये चलें।" विरूप ने कहा।

भीलों से घोड़ों को हिफाजत से देखने के लिए कह, दोनों नदी की मोड़ की ओर निकले। चार पाँच मिनट में उन्होंने नदी में, जहाँ वह पहाड़ का चक्कर काटती थी, एक घाट देखा और उसमें एक नाव देखी। वे पेड़ पौधों के पीछे छुपते छुपते उस ओर गये। वे घाट के पास पहुँचे। उसके किनारे के पेड़ों पर चढ़कर, वे नाव को ध्यान से देखने लगे। उसमें कोई न था। पर नाव के चारों ओर कितने ही मगर घूम रहे थे।

"सोमू, एक सिर पर यूँ बाण मार कि उसके टुकड़े टुकड़े हो जायें।" धूमक ने कहा।

सोमक बाण छोड़नेवाला था कि विरूप ने "....साहब...." कुछ कहना चाहा। परन्तु इतने में सोमक का बाण एक मगर के सिर पर तपाक से लगा। मगर पानी में उछला और मनुष्य की तरह चीखा।

(अभी है)

देवी पूजा

विक्रमार्क ने अपना हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतार कर, हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"आधी रात के समय तुम्हें यूँ कष्ट झेलता देख मुझे राजा हंसपाद की कहानी याद आ रही है। उसने भी चम्पा के फूल के लिए यूँ कष्ट झेले थे। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं तुम्हें उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने कहानी सुनानी शुरु की।

कुंजरावती नगर में हंसपाद नाम का राजा रहा करता था। उसके भद्रपाल नाम का लड़का था। उसकी कुमुद द्वीप की राजकुमारी से शादी हुई।

वेताल कथाएँ

शादी के बाद भद्रपाल ने तीन मास ससुराल में काटे। फिर पत्नी के साथ वह एक नौका में अपने देश के लिए निकला। हंसपाद को पहिले ही सूचना मिल गई थी कि फलाने दिन वह निकल रहा था।
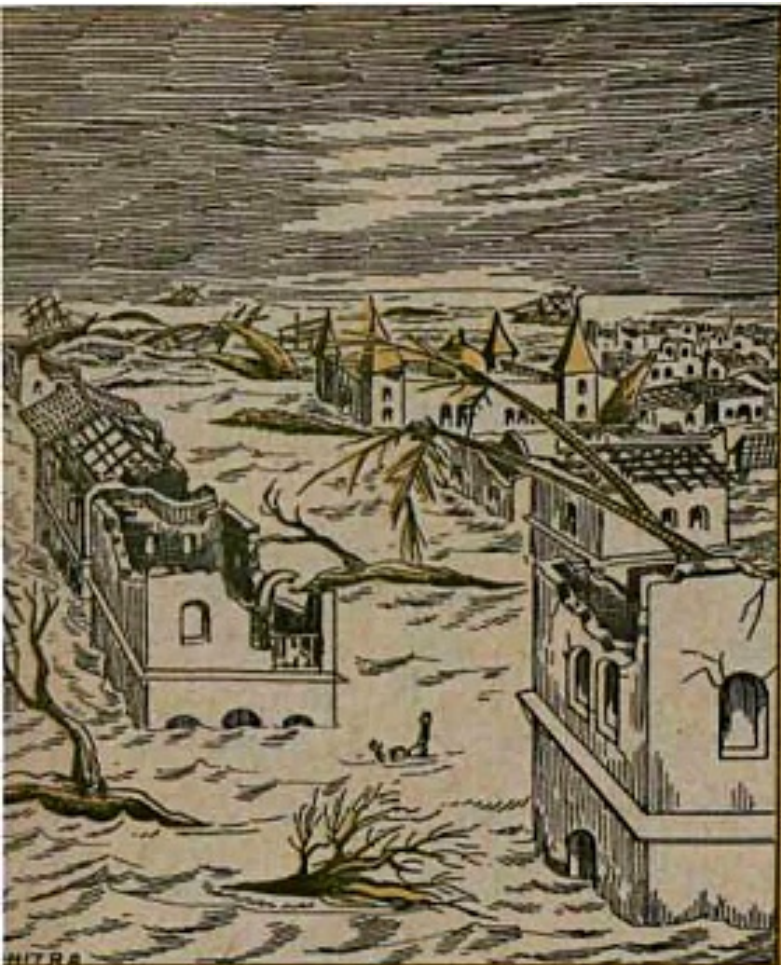
भद्रपाल की नौका अभी समुद्र में ही थी कि भयंकर तूफ़ान उठा। इस तूफ़ान के कारण कुंजरावती में बड़े बड़े पेड़ गिर गये। घरों की छतें उखड़ गईं। नगर में समुद्र का पानी भी आ गया। राजा को यह भी जानकारी मिली कि समुद्र के तट पर मछियारों की नावें और व्यापारियों की नौकायें डूब गई थीं। तूफ़ान की खबरें सुनकर, राजा हंसपाद चिन्तित हो उठा कि न मालूम उसके पुत्र और पुत्रवधू की क्या हालत हुई होगी।

"माँ, यदि मेरे पुत्र और वधू सुरक्षित पहुँच गये, तो मैं उनके आने के दिन ही हज़ार सोने के सिक्कों की कीमत के चम्पा के फूलों से तुम्हारी पूजा करूँगा।" राजा ने अपनी कुलदेवी महादेवी के सामने यह मनौती की।

तीसरे दिन तूफ़ान थम गया। चौथे दिन राजा को शुभवार्ता मिली। जिस नौका में उसके पुत्र और वधू आ रहे थे उसका तूफ़ान में कुछ न बिगड़ा था। नौका का कप्तान बड़ा चतुर था। यह जानकर कि तूफ़ान आनेवाला था, उसने अपनी नौका एक द्वीप के बन्दरगाह में रोक दी थी। तूफ़ान के रुकते ही नौका फिर चल पड़ी।

इस शुभवार्ता के कुछ देर बाद भद्रपाल पत्नी के साथ अपने घर पहुँचा।

"देवी ने मेरी प्रार्थना सुन ली है। आज ही मैं कुलदेवी की हज़ार सोने के सिक्कों की कीमतवाले चम्पा के फूलों से

पूजा करूँगा।" कहकर राजा ने अपने सैनिकों से जहाँ जहाँ चम्पा के फूल मिले, खरीदकर लाने के लिए कहा और स्वयं महादेवी के आलय में प्रतीक्षा करने लगा।

सैनिक जो दुपहर को निकले थे, शाम तक वापिस न आये और जब आये, तो खाली हाथ आये। कहीं एक फूल न मिला था। तूफान के कारण फूलों के सब बाग उजड़ गये थे।

यह सुनकर मन्त्री को न सूझा कि क्या किया जाय? उसने मन्दिर में राजा के पास जाकर कहा—"महाराज! महादेवी की पूजा कभी और कीजिये। आज कहीं भी एक फूल नहीं मिला है। हमारे आदमी सब बागों में हो आये हैं और झड़े, उजड़े पौधे स्वयं देख आये हैं।"

"मैंने मनौती की थी कि जिस दिन लड़का सुरक्षित आयेगा, उसी दिन देवी की चम्पा के फूलों से पूजा करूँगा। जब तक फूल नहीं मिलेंगे, तब तक मैं यहीं बैठा रहूँगा।" राजा ने कहा।

फूल बेचनेवाले उस समय मन्दिर के पास ही आया करते थे, कहीं कोई आया हो यह सोचकर, मन्त्री बाहर देखने गया। कोई

न था। मन्त्री जान गया कि सचमुच कहीं फूल न थे। इतने में एक स्त्री एक टोकरी में फूल लेकर मन्दिर के पास बैठ गई।

मन्त्री ने उसके पास जाकर पूछा—"चम्पा के फूल चाहिए। हैं क्या?"

"ये ही हैं। बाबू...." कहते हुए उस स्त्री ने दो मुट्ठी भर फूल दिखाये।

"बस, इतने ही। ये तो काफी नहीं हैं। हमें हज़ार सोने के सिक्कों के फूल चाहिए।" उसने कहा।

"चाहे हजार सिक्कों के हों, या लाख सिक्कों के, मेरे पास बस इतने ही फूल हैं।"

उस स्त्री ने कहा। मन्त्री ने मन्दिर में जाकर राजा से उस स्त्री की बात कही।

राजा के मन में एक बात कौंधी, "मन्त्री! देवी की कृपा हुई है। उस स्त्री के फूल ही हज़ार सोने के सिक्के देकर खरीद लीजिये।"

मन्त्री ने उस स्त्री को हज़ार सोने के सिक्के देकर उसके फूल लेकर राजा के पास आया। पूजारी आकर राजा के नाम पर फूलों को चढ़ानेवाला था कि फूल बेचनेवाली स्त्री ने भी आकर दो मुट्ठी-भर फूल देकर कहा—"इन्हें भी देवी पर चढ़ाओ।"

यह देख मन्त्री को बड़ा क्रोध आया। "दुष्ट कहीं की, मुझ से हज़ार सिक्के लेकर, जब तुमने दो मुट्ठी-भर फ़ूल दिये तब भी मैं मान गया और जब तुम्हारे पास और दो मुट्ठी फ़ूल थे, तो तुमने उनको क्यों नहीं दिया?"

"मैंने पहिले ही बता दिया था कि बेचने के लिए मेरे पास दो मुट्ठी भर ही फ़ूल थे। उनके लिए क्या मैंने आपसे हज़ार सोने के सिक्के माँगे थे? आप ही ने दिये थे। मेरे पास जो बाकी दो मुट्ठी फ़ूल थे, वे बेचने के लिए नहीं थे। मैं उनसे देवी की पूजा करती हूँ। जब मेरे पास दो टोकरी फ़ूल होते हैं, तो मैं एक टोकरी ही बेचती हूँ। दूसरी टोकरी के फ़ूलों से देवी की पूजा करती हूँ। यदि मेरे पास दो फ़ूल होते, तो मैं एक फ़ूल ही आपको बेचती। मैंने कोई धोखा नहीं किया है।" उस स्त्री ने कहा।

यह बात सच थी, उसके पति के फ़ूलों के बाग थे। उनमें जितने फ़ूल खिलते, उनमें से आधे वे बेच देते और आधे देवी पर चढ़ा देते। उसके पति और सास ने यह जानकर उसे घर से निकाल दिया

था कि वह फूल बेचकर घर पैसे नहीं लाया करती थी और घर को वह इस तरह लूट रही थी। तब वह अपने बूढ़े नाना के पास गई। उसके घर के आँगन में उसने फूलों के पौधे लगवाये। उन पर लगे आधे फूलों को वह बेच देती और उनसे अपना और अपने नाना का जीवन निर्वाह किया करती और आधे देवी पर चढ़ा देती थी।

यह जानते हुए भी कि वह रोज देवी पर फूल चढ़ाया करती थी, पूजारी ने उसकी बात पर बिगड़कर कहा —"जानती हो, ये कौन हैं? महाराजा। उनसे हज़ार सोने के सिक्के लेकर भी, अपने पास आधे फूल रखे हुए हो। तुम जैसी के पूजा के फूल क्या देवी स्वीकार करेंगी?" कहकर उसने फूल बेचनेवाली स्त्री के फूल राजा के फूलों के साथ मिला दिये। तुरत राजा के फूल अंगारे-से हो गये, मुरझा गये। यह देख राजा पगला-सा गया।

"नहीं पुजारी....उस स्त्री के फूल उस स्त्री को ही दे दो। महादेवी के लिए हम दोनों ही समान हैं।" राजा ने कहा।

पुजारी ने काँपते हुए हाथों से, ताजे फूलों को अलग किया, तब मुरझाये हुए फूल यकायक खिल-से उठे। उसने राजा और उस स्त्री के नाम से अलग अलग पूजा करके उनको भेज दिया।

उसके बाद फूल बेचनेवाली स्त्री की जिन्दगी भी सुधरी। यह जानते ही कि उसकी पत्नी के पास हज़ार सोने के सिक्के थे उसका पति उठाकर उन्हें ले गया। उस स्त्री पर देवी की विशेष कृपा थी, यह जान सब उसे आदर की दृष्टि से देखने लगे।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, किसकी भक्ति अधिक उत्कट थी? राजा की या उस फूल बेचनेवाली की?

इस प्रश्न का उत्तर यदि तुमने जान बूझकर न दिया तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"निस्सन्देह फूल बेचनेवाली स्त्री की भक्ति अधिक बड़ी है। सच है कि राजा ने दो मुट्ठी-भर फूलों के लिए हज़ार सोने के सिक्के देकर अपनी मनौती पूरी कर ली थी, उसका यह कहना भी बड़ी बात थी कि जब तक मनौती पूरी न होगी, तब तक वह मन्दिर में ही रहेगा। इसमें राजा की निष्ठा अधिक व्यक्त होती है। अपने पुत्र और वधू के सुरक्षित के प्रत्यागमन के स्वार्थ में उसने उस तरह की पूजा करने की मनौती की थी। इस प्रकार की मनौती करने के मौके उसके जीवन में एक दो बार से अधिक न आये होंगे। यही नहीं राजा के लिए हज़ार सोने के सिक्के कोई बड़ी रकम नहीं है। परन्तु फूल बेचनेवाली स्त्री की कुछ और बात थी। एक पैसा भी उसके लिए बड़ी रकम थी, फिर भी वह रोज़ अपने आधे फूलों से देवी की पूजा करके वह अपनी आधी आमदनी यूँ लगा रही थी। उसने कोई मनौती न की थी....न देवी से उसने कुछ चाहा ही था। पत्नी के लिए पति द्वारा छोड़ दिये जाने से बड़ा कोई कष्ट नहीं हो सकता। इस कष्ट के आने पर भी उसने देवी की पूजा नहीं छोड़ी। इसलिए किसी भी हालत में राजा की भक्ति की तुलना फूल बेचनेवाली स्त्री की भक्ति से नहीं की जा सकती।" राजा ने कहा।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

आजीवन दीक्षा

सुरैभ्य नाम के मुनिकुमार ने गुरु के पास अध्ययन पूरा करके सौजन्य नाम की कन्या से विवाह किया। उसके पास कुछ शिष्य भी जमा हो गये।

एक बार विद्वानों की सभा हुई। बड़े बड़े वेदों के विद्वान गोष्ठी में आये। "हमने कितने वेद सीखे हैं? बहुत कम। वस्तुतः वेदों में पारंगत यदि कोई हैं, तो माण्डव्य मुनि ही हैं।" बड़ों का यह कथन सुरैभ्य के कानों में पड़ा। तुरत वह माण्डव्य के पास गया। उसका शिष्य बनकर वह फिर अध्ययन करने लगा।

चार पाँच वर्षों में माण्डव्य ने सुरैभ्य को जो कुछ वेद वह जानता था, वे बता दिये। "क्या सब वेद इतने ही हैं? या और कुछ भी हैं?" सुरैभ्य ने पूछा।

माण्डव्य ने कहा—"ब्रह्मा के मुख से व्यक्त हुए वेदों में देवेन्द्र ने चार भाग ही भूमि पर आने दिये। उनमें से एक भाग ही मैंने लिया है, बाकी भारद्वाज के पास हैं।"

तब क्या था? सुरैभ्य, भारद्वाज के आश्रम में गया। उसकी सेवा शुश्रुषा करके जितने वेद वह जानता था, उसने उससे सीख लिये। तब भी सुरैभ्य को सन्तोष न हुआ।

"यदि और भी वेदाध्ययन करना हो, तो क्या उपाय है?" उसने भारद्वाज महामुनि से पूछा।

"भूलोक में जितना वेद अवतरित हुआ है, वह सब तुमने अध्ययन कर लिया है। यदि और वेदाध्ययन करना चाहते हो, तो इन्द्र को सन्तुष्ट करो और उससे

ही वह ज्ञान प्राप्त करो और कोई मार्ग नहीं है।" भरद्वाज ने कहा।

सुरैभ्य एक अच्छे स्थल पर विधि के अनुसार इन्द्र का साक्षात्कार करने के लिए तपस्या करने लगा। उसकी तपस्या के कुछ दिन बाद इन्द्र सन्तुष्ट हुए। उसके सामने प्रत्यक्ष हुए और उससे वर माँगने के लिए कहा।

"मैं वेदों में पारंगत होने के लिए आपकी तपस्या कर रहा हूँ। जो कुछ वेद आपके पास हैं, वह मुझे अनुगृहीत कीजिये।" सुरैभ्य ने कहा।

इन्द्र उसके सामने वेदों का गठ्ठर फेंककर अन्तर्धान हो गया। सुरैभ्य एक एक पत्र लेकर पढ़ने लगा। वह जब यूँ पढ़ रहा था, तो उसकी पत्नी उसके पास आयी।

"क्यों आये? मैंने तो तुमको नहीं बुलाया है?" सुरैभ्य ने कहा।

"मैं आपकी पत्नी हूँ और अपना धर्म निभाना मेरा कर्तव्य है। इसलिए ही मैं आई हूँ।" सौजन्य ने कहा।

"मैं इन वेदों को पूरा किये बिना गृहस्थी नहीं करूँगा।" सुरैभ्य ने कहा।

सच यह था कि उसके आने से उसका अध्ययन और अच्छी तरह चलने लगा था। अब उसे कन्दमूल जमा करके लाने की ज़रूरत न थी। गौ की देखभाल करने की ज़रूरत न थी। आश्रम के सब काम सौजन्य ही कर लेती थी। एक दिन उसने देखा कि वेदों के गठ्ठर में एक भी पत्र नहीं रह गया था। उसने सोचा कि उसने वेद पढ़ लिए थे। वह भारद्वाज मुनि के पास अपनी कृतज्ञता जताने के लिए गया।

उसने भारद्वाज को नमस्कार करके कहा—"आपकी दया से मैंने इन्द्र के साक्षात्कार के लिए तपस्या की, उनके

अनुग्रह से मैंने वेद पाये, उनका आद्योपान्त मैंने अध्ययन किया।

"यही बात है, तो तुम से बड़ा वेद वेत्ता इस संसार में कोई नहीं है। जो वेद तुम जानते हो, वह शिष्यों को सिखाओ यह तुम्हारा कर्तव्य है।" इस प्रकार भारद्वाज ने सुरैभ्य को आशीर्वाद दिया।

सुरैभ्य अपने आश्रम वापिस चला आया। यह जानकर कि वह वेद पारंगत हो गया था, उसके पुराने शिष्य उसको ढूँढ़ते हुए आये। सुरैभ्य ने जब अपने शिष्यों से वेदों का अध्ययन करवाने का प्रयत्न किया, तो इन्द्र के दिये हुए वेद उसे याद ही न आये। उसे वे भाग ही स्मरण रहे, जो उसने भारद्वाज और माण्डव्य से सीखे थे। सुरैभ्य को अपनी गलती मालूम हो गई। इन्द्र के दिये हुए वेद उसने पढ़े तो थे, पर उनको सस्वर न पढ़ा था। उनका अध्ययन भी न किया था। अपनी गलती जानकर सुरैभ्य ने प्रायश्चित्त किया। उसने वेदों से प्रत्यक्ष होने की प्रार्थना की। वेदों का गट्ठर उसके सामने आया। इस बार विधिपूर्वक निष्ठा से उसने अध्ययन प्रारम्भ किया।

वर्ष बीतते गये। सुरैभ्य की दृष्टि क्षीण होने लगी। उसने सिर उठाकर देखा। एक वृद्धा बैठी हुई थी।

"तुम कौन हो? मेरी पत्नी सौजन्य कहाँ है?" उसने उससे पूछा।

"मैं ही सौजन्य हूँ।" उसने कहा।

सुरैभ्य ने आश्चर्य में अपने को देखा। उसमें भी बुढ़ापा आ गया था। चमड़े पर सलवटें पड़ गई थीं। बाल पक गये थे। उसमें अध्ययन की शक्ति भी जाती रही।

सुरैभ्य ने इन्द्र का ध्यान किया। इन्द्र प्रत्यक्ष हुआ। "देवेन्द्र, आपने मेरी

इच्छानुसार वेद तो दे दिये हैं, पर उनका अध्ययन करने के लिए शक्ति नहीं दी। मेरी आयु खतम हो रही है, पर वेदों का पठन पूरा नहीं हो पाया है।" उसने कहा।

"मैं तुम्हारी वेदाध्ययन तत्परता से सन्तुष्ट हूँ। मैं तुम्हें तीन सौ वर्ष आयु देता हूँ।" कहकर इन्द्र अदृश्य हो गया। सुरैभ्य फिर यौवन प्राप्त करके वेदाध्ययन में लग गया। इस बीच सौजन्य बूढ़ी होकर मर गई। सुरैभ्य उसका दहन संस्कार करके फिर वेदों के अध्ययन में लग गया। पर उसका अध्ययन न चला। उसके सामने कोई भूत से मँडराये और पूछने लगे—"तो हमारी क्या बात है ?"

सुरैभ्य उन भूतों के बारे में न जान सका। वे क्यों उसका अध्ययन भंग कर रहे थे यह जानने के लिए वह अपने शिष्यों के साथ भारद्वाज मुनि के पास गया और उसको सब बताया।

भारद्वाज ने सब सुनकर कहा—"जो भूत तुम्हें दिखाई दिये हैं, वे तुम्हारे पाप हैं। हर मनुष्य के पितृ ऋण, मातृ ऋण, पत्नी ऋण होते हैं। उनको न चुकाना बड़ा पाप है। वेदाध्ययन में मग्न होकर तुमने अपना कर्तव्य पूरा नहीं किया। तुम्हारी पत्नी आजीवन तुम्हारी सेवा करके, असन्तुष्ट रहकर तुम्हारे शिष्य के लड़की के रुप में पैदा हुई है। तुम उससे विवाह करके, बच्चे उत्पन्न करके सब ऋण पूरा कर लो। वेद अनन्त हैं। इन्द्र यदि तुम्हें अनन्त आयु भी दें, तब भी तुम उन्हें समाप्त नहीं कर सकते।" उसने उपदेश दिया। सुरैभ्य ने भारद्वाज के उपदेश के अनुसार विवाह कर लिया। गार्हस्थ्य धर्म निभाकर मुक्त हो गया।
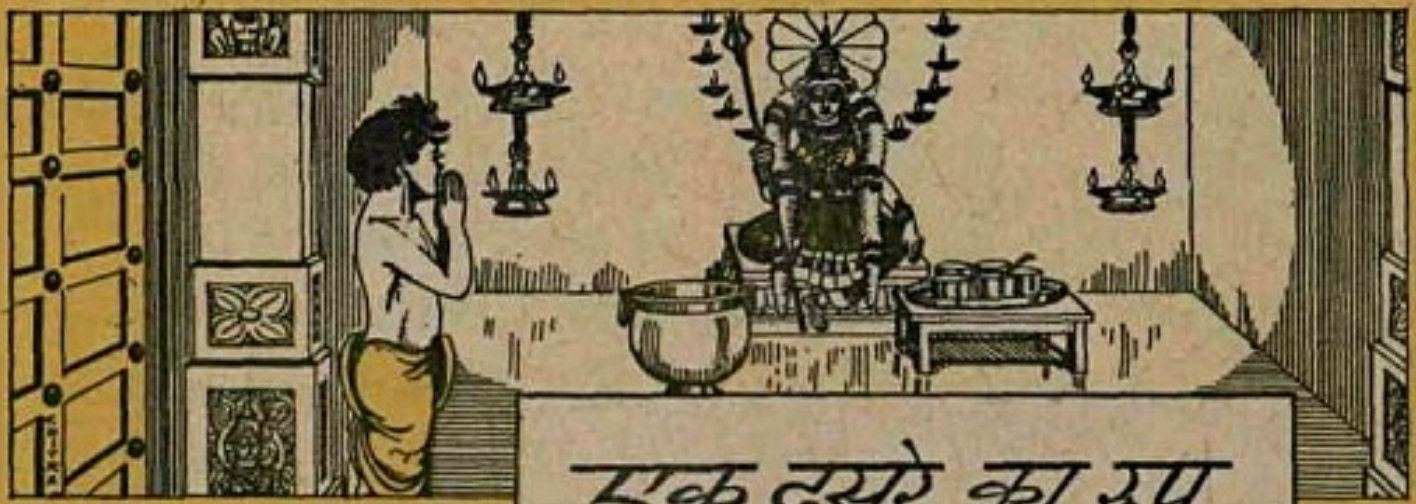
एक दूसरे का रूप

एक गाँव में गिरधारी नाम का एक गरीब रहा करता था। उसके दस वर्ष का एक लड़का था, जिसका नाम कन्हैय्या था। गिरधारी, रोज कस्बे जाता, वहाँ मज़दूरी वज़दूरी करता और जो कुछ कमाता उससे घर की चीज़ें खरीदकर लाता। वह रोज़ अपने लड़के को साथ ले जाता। कन्हैय्या, अपने पिता की मज़दूरी में मदद किया करता। कस्बे के खेल तमाशे देखा करता। दुकानों में कीमती चीज़ें देखकर, वह पिता को सताया करता—"वह खरीद दो, मुझे यह खरीद दो।"

"अरे, वे तो राजाओं के बेटे खरीदते हैं। मज़दूरों का लड़का नहीं खरीदता।" गिरधारी कहा करता।

जो उन वस्तुओं को खरीदते, उनको देखकर कन्हैय्या पूछा करता—"क्या ये सब महाराज के लड़के ही हैं?"

"क्यों नहीं हैं! जो ऐसी वस्तुएँ खरीदते हैं, वे महाराजाओं के लड़के ही हो सकते हैं।" पिता कतहा।

"मैं अगर महाराजा के यहाँ पैदा होता तो कितना अच्छा होता। मैं क्यों नहीं पैदा हुआ बाबा?" कन्हैय्या पूछा करता।

"उनको भगवान ने वह वर दिया है और तुम्हें नहीं दिया है।" पिता कहा करता। यह बात कन्हैय्या के मन में घर कर गई। भगवान की तपस्या करके उससे वर प्राप्त करके उसने भी महाराजा के लड़के के तौर पर पैदा होना चाहा। उस ग्राम में एक ग्राम देवी का मन्दिर था।

श्यामसुन्दर

कन्हैय्या रोज उस मन्दिर में जाता। देवी के सामने हाथ जोड़कर कहा करता–
"देवी, मुझे भी राजकुमार बनाओ।"

एक दिन दुपहर को कन्हैय्या ने इसी तरह प्रार्थना की। ग्राम देवी ने कहा—"यदि तुम राजकुमार बनना चाहते हो तो इस मन्दिर के पीछे जंगल में जाओ, वहाँ तुम्हें एक राजकुमार दिखाई देगा। तुम उसे छूकर भागो। उसके बाद तुम राजकुमार हो जाओगे।"

कन्हैय्या बड़े जोश में मन्दिर के पीछे के जंगल में गया। उस समय उस देश के राजा ने कहीं जाते हुए वहां अपने डेरे डलवा रखे थे। राजा का लड़का, कन्हैय्या की उम्र का ही था। वह एक हरिण को पकड़ने के लिए उसके पीछे भागता भागता कन्हैय्या के सामने आया। यह जानकर कि वह राजकुमार ही था, कन्हैय्या उसे छूकर जंगल में भाग गया।

कन्हैय्या के राजकुमार को छूते ही राजकुमार, कन्हैय्या-सा हो गया और कन्हैय्या, राजकुमार-सा। राजकुमार यह न जान सका, कैसे उसकी गरीब-सी शक्ल-सूरत हो गई थी। जिस लड़के के कारण उसकी वह हालत हुई थी, उसको खोजता खोजता जब मन्दिर के पास आया तो गिरधारी भी उस तरफ़ आया। उसने उससे पूछा—"क्यों बे, क्या कर रहा है यहाँ?"

राजकुमार ने उसकी बात अनसुनी कर दी। गिरधारी को देखते ही उसने कहा। "क्यों बे, मुझे मेरे पिताजी के डेरे पर पहुँचा दोगे? तुम्हें बख्शीश दूँगा।"

गिरधारी चकराया—"क्यों बे, क्या बक रहा है?"

कन्हैय्या के रूप में राजकुमार ने कहा—"जरा सम्भलकर बात करो। मैं राजा का लड़का हूँ।"

गिरधारी ने उस लड़के के मुख पर हाथ रखकर कहा—"बेटा, बन्द करो। अगर कोई सुनेगा, तो जान चली जायेगी। हमेशा राजा का लड़का बनने के सपने देखते रहे। अब सपने देखते देखते पगला भी गये हो?" कहता वह राजा के लड़के को उठाकर घर की ओर भागा।

राजकुमार लातें मारता चिल्लाता जाता था—"मुझे उतारो। कौन हो तुम? मुझे तुम कहाँ ले जा रहे हो? किसी छोकरे ने मुझे छूकर यूँ कर दिया। अगर वह दिखाई दिया, तो मैं उसे मार दूँगा।"

गिरधारी, उसको जैसे तैसे उठाकर ले गया। मन्त्र पढ़वाये। पागलपन ठीक करनेवाले भूत वैद्यों को दिखवाया। पर कोई फ़ायदा न हुआ। राजकुमार की हालत होते होते और बिगड़ती गई। गिरधारी को आखिर उसे खम्भे से बाँधना पड़ा। उसने सोचा कि उसका लड़का बुरी तरह पागल था, क्योंकि वह उसकी

झोंपड़ी को देखकर नाक भौं चढ़ाता, खाना देता, तो उसे छूता तक न।

इस बीच, राजकुमार को छूकर उसका रूप पानेवाला कन्हैय्या भागा जा रहा था, कि सैनिकों ने उसे पकड़ लिया। वे राजकुमार को ढूँढ़ रहे थे। कन्हैय्या को देखकर उन्होंने पूछा—"आप यहाँ हैं? हम ढूँढ़ते ढूँढ़ते हार गये।" वे उसे उठाकर राजमहल ले गये। तब तक राजा के लोग भी राजमहल में पहुँच गये थे।

राजमहल में हर चीज़ देखकर कन्हैय्या को अचरज हुआ। हर चीज़ को ध्यान

से देखता, उसे देख सैनिकों ने पूछा—"क्यों इस तरह ध्यान से देख रहे हैं? रोज़ ही तो देखते हैं यह सब!"

कन्हैय्या सैनिकों की बात अनसुनी करके सारे महल में घूमता रहा। पाकशाला में गया, वहाँ जो चीज़ें नौकरों के लिए बन रही थीं, वह उन्हें उठाकर खा गया। "क्या बढ़िया बनी हैं....वाह...." उसने कहा।

"अरे, आप को नौकरों की खाने की चीज़ें खाने को क्या पड़ी है? आपकी रसोई अलग हो रही है।" वहाँ के लोगों ने कहा। पर कन्हैय्या ने उनकी कुछ न सुनी।

वह देखने में तो राजकुमार की तरह था, पर उसका व्यवहार बिल्कुल राजकुमारों की तरह न था। नौकरों ने यह बात राजा से कही। राजा ने कन्हैय्या को अपने पास बुलाया। देखते ही वह समझ गया कि उसके लड़के पर किसी दुष्ट ग्रह का दुष्प्रभाव था। उसे एक कमरे में बन्द करके वैद्यों और मन्त्रवेत्ताओं को बुलवाया।

दो तीन दिन तक ग्रह पूजा, मन्त्रोच्चारण और वैद्यक की गई, पर उसकी हालत में कोई फर्क न आया। और तो और उसने राजमहल से भागने की भी कोशिश की।

राजा ने ढिंढोरा पिटवाया कि जो कोई उसके लड़के को ठीक कर देगा उसे दस हज़ार रुपये दिये जायेंगे।

यह खबर गिरधारी के गाँव भी पहुँची। सब ने बड़ी दिलचस्पी दिखाई। कन्हैय्या के रूप में, गिरधारी के घर रहनेवाले राजकुमार को सारी बात समझ में आ गई। उसको छूनेवाला लड़का गिरधारी का लड़का ही था, यह वह जान गया। पर वह यह न जान पाया था कि उसका क्या हुआ था। अब इस

घोषणा के कारण मालूम हो गया था कि वह उसकी जगह राजमहल में पहुँच गया था। हम दोनों के रूप इस तरह क्यों बदल गये हैं, यह वह जानता होगा। यदि उसने उससे एक बार बात की, तो वह भी जान जायेगा।

इसलिए राजकुमार ने अपना व्यवहार बिल्कुल बदल दिया और यूँ रहने लगा, जैसे वह सचमुच कन्हैय्या हो। गिरधारी बड़ा खुश हुआ। उसने उसको खोल दिया और घर में घुमने फिरने दिया। राजकुमार ने गिरधारी से कहा—"सुनते हैं, राजा का लड़का भी पागल हो गया है।

"हाँ, क्या तुमने ढिंढोरा सुना था? जो कोई उसे ठीक कर देगा, उसे दस हज़ार रुपये दिये जायेंगे।" गिरधारी ने कहा।

"मैं उसकी चिकित्सा कर सकता हूँ। चलो चलें।" राजकुमार ने कहा।

"यदि तुम उसे सचमुच ठीक कर दोगे, तो हमारी गरीबी गायब हो जायेगी।" गिरधारी ने कहा।

दोनों मिलकर राजमहल गये। राजकुमार को उस तरह अपनी ओर देखता देख, सैनिकों को आश्चर्य हुआ। यह लड़का

देखने में कोई और लगता है, पर ऐसा लगता है, जैसे वह राजमहल का चप्पा चप्पा जानता हो, यहाँ के हर आदमी को जानता हो, इसलिए उन्होंने कोई पूछताछ न की। वे सीधे राजकुमार को और गिरधारी को राजा के सामने ले गये।

"मुझे एक बार उस लड़के से बात करने दीजिये, तो मैं आपके लड़के को दिखा दूँगा।" राजकुमार ने राजा से कहा।

न मालूम राजा को इस बात पर क्यों विश्वास हो गया। राजा ने उसको कन्हैय्या के कमरे में जाने दिया।

दोनों में बातचीत हुई। कन्हैय्या ने जो कुछ गुज़रा था, राजकुमार को बताया और कहा—"मैं यहाँ नहीं रहूँगा। मुझे यहाँ कुछ भी अच्छा नहीं लगता है।"

"तुम्हारे घर मुझे कुछ नहीं अच्छा लगता है। मुझे फिर छुओ, देखें, फिर हमारी शक्लें बदलती हैं कि नहीं?" राजकुमार ने कहा।

कन्हैय्या ने राजकुमार को छुआ। दोनों पहिले के रूप आ गये। दोनों एक दूसरे के हाथ पकड़कर राजा के पास आये।

कन्हैय्या, "बाबा" जोर से चिल्लाते हुए अपने पिता के गले लगा। "मैं यहाँ हूँ। चलो, घर चलें।" उसने कहा।

गिरधारी ने सोचा कि वह फिर पागल हो गया था।

पर जब राजकुमार ने जो कुछ हुआ था, बताया तो सबके सन्देह जाते रहे। अपने लड़के को पाकर राजा बड़ा खुश हुआ, उसने गिरधारी और उसके लड़के कन्हैय्या को बहुत-सा ईनाम देकर भेज दिया।

दोषारोपण

चन्द्रपुर राज्य का सोमशंखर नाम का राजा था। वह यद्यपि उम्र में छोटा था, पर अक्ल में बड़ा तेज़ था। उसे अपने पुरोहित पर बड़ा विश्वास था। बिना उसकी सलाह के वह कुछ न किया करता था। केवल उसका विवाह ही, पुरोहित की सलाह पर नहीं हुआ था। इसका कारण यह था कि उसकी शादी के कुछ दिन पूर्व से ही, पुरोहित बीमार था।

वह बीमारी से ठीक ही न हुआ। यह जानकर कि पुरोहित अब और तब की हालत में था, राजा उसे देखने गया।

"मेरे बाद, मेरे लड़के शेषाद्रि को राजपुरोहित बनाकर, उसका पोषण कीजिये। वह किसी भी बात में मुझ से कम नहीं है।" पुरोहित ने राजा से कहा।

इसके बाद उसने अपने लड़के को बुलाया उसके कान में कोई रहस्य बताया, फिर उसने प्राण छोड़ दिये।

राजा ने शेषाद्रि को राजपुरोहित बनाया। राजा को क्या करना चाहिये था और कब और कैसे करना चाहिये था, वह बताया करता था, राजा भी उसकी सलाह माना करता था और शेषाद्रि के बताये काम, राजा के लिए सफल भी होते। इस कारण राजा को शेषाद्रि पर अत्यधिक विश्वास हो गया।

एक दिन राजा ने शेषाद्रि से कहा—"मैं शिकार पर जाने की सोच रहा हूँ। जल्दी ही इसके लिए अच्छा समय बताओ।"

"कल अगर सूर्योदय से चार घड़ी पहिले शिकार के लिए निकले, तो शिकार

विनयकुमार

सफ़ल होगा। उषाकाल में, पूर्वी हवा कुछ तेज़ी से चलेगी। पर वह अधिक देर तक न रहेगी।" शेषाद्रि ने कहा।

"तो तुम भी हमारे साथ आने के लिए तैय्यार रहो, शाम तक वापिस आ जायेंगे।" राजा ने कहा।

शेषाद्रि के बताये समय पर ही सब निकल पड़े। सवेरा होने से पहिले नगर से बाहर चले गये। ठीक उसी समय पूरवैय्या जोर से बहने लगी।

"अरे अरे कितनी ठंड है, तुमने पहिले ही बताया था कि हवा यूँ आयेगी। मुझे ही याद न रहा। जरा हमारे घर जाकर, सोने के कमरे में से, मेरा शाल लेते आना।" राजा ने शेषाद्रि से कहा।

शेषाद्रि अपने घोड़े पर जल्दी ही राजमहल में पहुँचा। वह सीधे राजा के कमरे में जा ही रहा था कि उसे तुरत मरते समय पिता का बताया रहस्य याद हो आया— "पति पत्नी के शयनकक्ष में न जाना।"

इसलिए उसने दरवाजे के पास खड़े होकर कहा—"राजा ने शाल लाने के लिए कहा है।"

"दरवाजे बन्द नहीं हैं। अन्दर आओ...." अन्दर से रानी ने कहा।

"क्या ज़रूरत है? आप ही शाल दे दीजिये।" शेषाद्रि ने कहा।

रानी ने एक किवाड़ खोलकर उसे शाल दिया। उसी समय किसी पुरुष का हाथ उसे अन्दर कमरे में खींचने की कोशिश करने लगा।

शेषाद्रि उस हाथ को छुड़ाकर, शाल लेकर, बहुत तेजी से बाहर आया। घोड़े पर सवार हो राजा से आ मिला।

उस दिन शिकार अच्छा रहा। शाम होते ही राजा अपने महल में

वापिस आ गया। शेषाद्रि अपने घर चला गया।

राजा जब अपने अन्तःपुर में पहुँचा, तो उसने देखा कि राजमहल का वातावरण रोज की तरह न था, सब दासियाँ दुःखी मालूम होती थीं। रानी बाल बिखेरे पुराने कपड़े पहिने रोती दिखाई दी।

जब राजा ने पूछा कि क्या हुआ था, तो उसने बताया कि शेषाद्रि शाल लेने आया और उसके साथ बलात्कार करके चला गया।

राजा को कहीं भी यह शक न था कि शेषाद्रि कभी ऐसे काम करेगा। पर रानी के लिए उस पर इस प्रकार दोषारोपण करने की कोई आवश्यकता न थी। सुनवाई अगर की गई तो बदनामी ही होगी। इस तरह की बात कोई नहीं जानता। यदि शेषाद्रि निर्दोष भी हो, तो उसका काम तमाम करने के सिवाय कोई और रास्ता नहीं है। उसको मरवाना भी चुपचाप होगा।

राजा ने यह निश्चय करके, अगले दिन दक्षिण द्वार के भट को बुलवाया—"अरे, तुम से एक आदमी आकर पूछेगा कि राजा का बताया काम किया है कि नहीं? जो कोई यह पूछे उसका झट सिर काट देना।"

शेषाद्रि ने रोज की तरह राजा के सामने आकर मन्त्रोच्चारण किया।

राजा ने शेषाद्रि से कहा—"दक्षिण के द्वार के भट को एक काम बताया है। तुम उसके पास जाकर पूछो कि राजा का कहा काम किया है कि नहीं?"

शेषाद्रि हाँ कहकर दक्षिण द्वार की ओर जा ही रहा था कि उसका एक ब्राह्मण मित्र उसे दिखाई दिया—"शेषाद्रि, मैं तुम्हारे लिए ही आ रहा हूँ। हमारे घर ज़रा सत्यनारायण पूजा करवाकर जाओ।"

अपने पिता का बताया हुआ एक और रहस्य उसे याद हो आया, वह उस ब्राह्मण मित्र के घर गया। उसके घर पूजा करवाकर, प्रसाद लेकर वह दक्षिण द्वार की ओर चल पड़ा।

इस बीच राजा के प्रधान मन्त्री विश्वजित ने राजा के पास आकर कहा—"कल आपके पुरोहित ने बड़ी बुरी तरह व्यवहार किया।

"हाँ, हाँ, मुझे मालूम है। हाँ मैंने दक्षिण द्वार पालक को एक काम सौंपा था। उसे उसने अब तक कर दिया होगा। जरा वह काम हुआ है कि नहीं, यह मालूम तो करके आओ।" राजा ने कहा।

विश्वजित तुरत दक्षिण द्वार के पास गया। वहाँ उसने सैनिक से पूछा—"अरे, राजा ने तुम्हें कोई काम करने को कहा था, क्या वह काम पूरा हो गया है?"

तुरत सैनिक ने विश्वजित का गला काट दिया। उसे एक कपड़े में लपेटकर, राजा को लाकर दिखाया।

"तुम्हारा काम हो गया है। आज द्वार बन्द करके तुम घर चले जाओ।" राजा ने कहा।

राजा ने सोचा कि कपड़े में शेषाद्रि का सिर ही लपेटा गया था। परन्तु थोड़ी देर बाद शेषाद्रि वापिस आया। उसने बताया कि दक्षिण द्वार बन्द है, और वहां कोई नहीं है।

राजा उसे देखकर बड़ा चकित हुआ। "कितने पहिले तुमसे दक्षिण द्वार जाने के लिए मैंने कहा था और तुम अब आ रहे हो। इतनी देर तुम क्या कर रहे थे?" राजा ने पूछा।

"एक मित्र के यहाँ सत्यनारायण पूजा करनी पड़ गई। इसलिए कुछ देरी हो गई।" शेषाद्रि ने कहा।

"मेरी आज्ञा से अधिक मुख्य तेरे लिए वह पूजा है?" राजा ने पूछा।

"हाँ, मेरे पिताजी ने मरते समय कुछ उपदेश दिये थे। मैं उन उपदेशों का उलंघन किये ही जीवन व्यापन कर रहा हूँ।" शेषाद्रि ने कहा।

"क्या हैं वे उपदेश?" राजा ने पूछा।

"पति पत्नी के शयनकक्ष में कभी न घुसो। अन्तःपुर के रहस्यों को किसी को न बताओ। राजकार्य की अपेक्षा देवकार्य अधिक मुख्य समझो। यह सोच राजकार्य

की अपेक्षा देवकार्य अधिक मुख्य है मैं पूजा पूरी करके आपके काम पर गया।" शेषाद्रि ने कहा।

"पर तुमने यह न बताया कि कल सवेरे तुम कैसे शाल लाये थे? तुम तो पति पत्नी के शयनकक्ष में नहीं न प्रवेश करते हो?" राजा ने पूछा।

"चूँकि उसमें एक अन्तःपुर का रहस्य है, इसलिए मैंने आपसे उसके बारे में नहीं कहा था।" शेषाद्रि ने कहा।

"चूँकि मैं ही पूछ रहा हूँ। इसलिए कह सकते हो। बताओ।" राजा ने कहा।

रानी का उसे कमरे में बुलाना उसका उससे शाल माँगना, शाल लेते समय किसी पुरुष के हाथ का उसे अन्दर खींचना और उससे अपने को छुड़ाकर चले जाना, आदि बातें शेषाद्रि ने राजा से कही।

राजा ने सब सुनकर कहा—"तुम ज्ञानी हो। इस बात के पीछे क्या रहस्य है, जरा मुझे साफ़ साफ़ तो बताओ।"

"महाराज, शाल ले जाते समय मैंने यह सब सोच लिया था। आपके किसी मित्र ने आपको मारने की चाल चली थी। आपका विवाह भी उसी ने तय किया था। विवाह के बाद वे दोनों आपकी हत्या करने की बात सोच रहे थे। परन्तु मैं उनके रास्ते में काँटे की तरह था। इसलिए पहिले उन्होंने मुझे मारने की ठानी। मैं यह सोच निश्चिन्त रहा कि कोई चाल न चलेगी। मेरा अब यह भी विश्वास है कि आपको अब शत्रु भय नहीं है। इसलिए ही मैंने आपको सावधान न किया था।" शेषाद्रि ने कहा।

शेषाद्रि के यह कहने पर, राजा ने वह गट्ठर खोला उसमें विश्वजित का सिर देखकर कहा—"यह ही मेरा शत्रु हो सकता है। जब तुम्हारे पिता बीमार थे, इसी ने मेरे विवाह का भार अपने ऊपर लिया था।"

राजा ने अपने मन्त्री का सिर ले जाकर अपनी पत्नी को दिखाया। वह यकायक चीखी और मूर्छित हो गई, उसकी दुष्टता साबित हो गई। राजा ने उसको जेल में डाल दिया। उसने एक और कन्या से, जिसे शेषाद्रि ने चुना था, विवाह किया। शेषाद्रि की सलाह पर चलता वह सुख से रहने लगा।

शुभान्गी

एक गाँव में ईश्वरदास नाम का एक युवक रहा करता था, क्योंकि वह जरा मन्दमति था, उसे शिक्षा के लिए गुरुकुल भेजा गया। ईश्वरदास, गुरुकुल में कई साल रहकर, शिक्षा पूरी करके, ग्राम वापिस आया और कदम कदम पर तत्व ज्ञान प्रदर्शित करने लगा—"अरे....वाह.... यह लड़का तो बड़ा ज्ञानी हो गया है।" गाँव के लोगों ने उसकी प्रशंसा की।

चूँकि शिक्षा पूरी हो गई थी, ईश्वरदास का योग्य कन्या से विवाह करके गृहस्थी बसाने का समय आ गया था। उसे अपनी पुत्री देने के लिए कुछ लोग तैयार हो गये। गाँव की सयानी लड़कियों में शुभान्गी नाम की भी एक बड़ी अक्लमन्द लड़की थी। घर का काम काज अच्छी तरह किया करती, पर अष्टावक्र-सी थी। उसके पैर, हाथ, गला, कमर, पीठ सभी टेढ़े मुड़े हुए थे। उस शुभान्गी भला कौन शादी करता? सब जब यह सोच रहे थे कि उसकी शादी होगी की नहीं। ईश्वरदास ने कहा—"मैं उससे शादी करूँगा।" सम्बन्धियों ने उसको शादी न करने के लिए समझाया भी, पर वह न माना। "भार्या रूपवती शत्रुः मैं शुभान्गी से ही विवाह करूँगा।" उसने कहा।

"अरे कितना धर्मात्मा है।" गाँव के लोगों ने कहा। ईश्वरदास के विवाह के कुछ दिन बाद उसका पिता मर गया। गृहस्थी का भार ईश्वरदास पर पड़ा। पर वह कमाने में नहीं लगा। रोज एकतारा लेकर ज्ञान के गीत गाता, सारा गाँव घूमकर, रोज जितनी भिक्षा की ज़रूरत

होनी उतनी इकट्ठा कर लाता। शुभान्गी उसे पकाकर खिला देती।

गाँववाले उसके बारे में क्या सोच रहे थे....एक दिन उसके कान में पड़ी। " विश्वरदास बड़ा अच्छा है, उसने जान बूझकर अष्टावक्र से विवाह किया है, पिछले जन्म में उसने शायद कन्यादान नहीं किया था।"

दास को इन बातों में कुछ सचाई भी दिखाई दी। उसने पढ़ रखा था कि जो कन्यादान करते हैं, उनको सुन्दर पत्नियाँ मिलती हैं, उनको पेट भर खाना मिलता है। फिर भी लोगों के मना करने पर भी उसने भौंड़ी स्त्री से विवाह किया था। पर सब कुछ ठीक करनेवाला भगवान था। यदि ईश्वर के लिए तपस्या की गई तो वह सन्तुष्ट होकर उसकी पत्नी को सुन्दर कर सकता है। पर ईश्वर कहाँ है? मेरे हृदय में ही है "शिवोहं।" इस मन्त्र को गुरुजी ने विस्तारपूर्वक समझाया था, "शिवोहं" का अर्थ है—मैं ही शिव हूँ। मुझ में शिव है।"

अपने में स्थित शिव की स्तुति करके शुभान्गी को सुन्दरान्गी बनाने का ईश्वरदास ने निश्चय किया। उसने पत्नी से कहा—"कल मुझे एक काम पर जाना है। बहुत से परौंठे और लोटा भर घी तैयार रखो।" शुभान्गी ने वैसा ही किया।

ईश्वरदास एक निर्जन स्थल में गया। अपने में स्थित शिव का स्मरण करके वह एक एक परोठे को "घी" में भिगोकर "शिवोहं" कहता मुख में डालने लगा। जल्दी ही उसका पेट फूल गया। शिव और पार्वती ईश्वरदास को देख रहे थे। पार्वती को उस पर दया आगई। उसके कहने पर शिव पार्वती के साथ ईश्वरदास को प्रत्यक्ष हुए और उससे वर माँगने के लिए कहा।

ईश्वरदास ने पार्वती के अद्भुत सौन्दर्य को देखकर तुरत सिर झुका लिया। अपनी पत्नी को सुन्दर बनाने के लिए भी वह न कह पाया। उसकी हालत देखकर उसकी मन की बात समझकर शिव ने उसके हाथ में तीन पत्थर देकर कहा—"इनसे तुम्हारी तीन इच्छायें पूरी होंगी। एक एक इच्छा के बाद, एक एक पत्थर को दूर फेंक देना।" यह कहकर वह पार्वती के साथ अन्तर्धान हो गया।

जब तक शिव और पार्वती उसके सामने रहे, ईश्वरदास ठीक तरह साँस भी न ले पाया था। उनके जाने के बाद उसने लम्बी साँस ली। शिव के दिये हुए तीन पत्थरों को लेकर वह घर गया। "मेरी पत्नी संसार में सब से अधिक सुन्दर हो।" कहकर उसने एक पत्थर फेंका। तुरत उसकी अष्टावक्र पत्नी जगन्मोहिनी बन गई।

शुभान्गी अपने शरीर में हुए परिवर्तन को देखकर चकित हो रही थी कि ईश्वरदास ने उसको अपनी तपस्या के बारे में बताया और यह भी बताया कि कैसे शिव और पार्वती उसको प्रत्यक्ष हुए थे?

"अच्छा है, अभी दो पत्थर और हैं। उनसे क्या माँगेंगे? आप एक वर यह माँगिये कि आप महाराजा होना चाहते हैं।" शुभान्गी ने कहा।

"नहीं नहीं, राजा बनूँगा, तो युद्ध करना पड़ेगा। अहिंसा परमोधर्मः....मैं जो चाहता था, वह एक इच्छा पूरी हो गई है। बाकी इच्छायें आवश्यकतानुसार बाद में देख लेंगे।" कहते हुए बाकी दो पत्थर ताक में रख दिये।

अगले दिन जब ईश्वरदास भिक्षा के लिए निकला, तो शुभान्गी, कलश कमर पर

रखकर, ताकि गाँववाले उसका सौन्दर्य देख सकें, घाट की ओर निकली।

उसका सौन्दर्य देखकर लोग स्तम्भित रह गये। कई परिचितों ने भी उससे पूछा—"तुम कौन हो?" जब उसने कहा कि वह शुभान्गी थी, तब भी उनको विश्वास न हुआ। रास्ते में रुक रुककर, जो कोई मिलता उससे बहुत देर तक बातें करती। शुभान्गी बहुत देर बाद घाट पर पहुँची।

पिछले दिन रात को एक राजनर्तकी राजमहल से भाग गई थी। उसको राजभट सवेरे से ढूँढ़ रहे थे। उनमें से कुछ घाट के पास उसे खोज रहे थे, शुभान्गी को देखकर उन्होंने सोचा कि वह ही राजनर्तकी होगी। उसने बहुत हाँ ना की, पर सैनिकों ने एक न सुनी। ईश्वरदास को, जो तब भीख माँग रहा था, पता लगा कि उसकी पत्नी को सैनिक ले जा रहे थे। वह तुरत घर भागा भागा गया, ताक में से एक पत्थर उठाकर "मेरी पत्नी भालू बन जाये, सैनिकों को डराकर वह घर चली आये।" यह चाहकर उसने एक पत्थर फेंक दिया।

थोड़ी देर में शुभान्गी भालू के रूप में घर वापिस चली आई। उस भालू को देखकर ईश्वरदास ही डर के कारण काँपने लगा। जब तक उसको अपनी दूसरी इच्छा याद न हो आयी, तब तक वह न सोच सका कि वह भालू उसकी पत्नी ही थी।

तुरत वह ताक के पास गया। तीसरा पत्थर निकालकर उसने कहा—"मेरी पत्नी पहिले की तरह हो जाये।" और उसे दूर फेंक दिया। शुभान्गी फिर अष्टावक्र होकर उसके सामने खड़ी हो गई।

धोखा घड़ी

एक बार कान्तिलाल अपनी पत्नी और पाँच बच्चों के साथ पन्नालाल के घर आया। "पन्नालाल जी, सिवाय आपके हमारी कोई मदद करनेवाला नहीं है। मैं इसी गाँव में पैदा हुआ और बड़ा हुआ। मैं यहाँ से शहर गया, वहाँ व्यापार किया और नुक्सान उठाया। बारह साल वहाँ रहा। सब कुछ खो खाकर, कंगाल होकर अब फिर गाँव वापिस आया हूँ। कर्ज़े से लदा हुआ हूँ। अगर आपने थोड़ी-सी मदद की, तो मैं यहीं रह जाऊँगा।"

"जो मुझ से बन सकेगा, मैं अवश्य करूँगा।" पन्नालाल ने कहा।

कभी उस गाँव में, कान्तिलाल का मकान था। थोड़ी बहुत ज़मीन भी थी। उसका घर गाँव से बाहर था। वह बड़ा पुराना भी था। बारह साल पहिले, शहर जाते जाते ज़मीन के साथ कान्तिलाल ने वह मकान भी बेचना चाहा। परन्तु उसे किसी ने खरीदा नहीं। अब वह घर बिल्कुल ढ़ह गया था। उसमें छोटे छोटे कई पौधे भी उग आये थे।

ज़मीन बेचकर, जो पैसा मिला उससे कान्तिलाल ने लकड़ी के व्यापार में और काले बाजार में काफ़ी रुपया कमाया। चूँकि वह बिल्कुल आलसी था, इसलिए शहरी जीवन उसे खूब भाया। वह शहर के विनोदों का आदि हो गया। दुस्संगत में पड़ गया। ऐश भी करने लगा। ताश और जुये में जो रुपया चोरी से कमाया था, उसे पानी करने लगा। विनोद और विलास में, उसकी पत्नी भी उससे कम

न थी। आखिर जो कुछ था, वह सब खो बैठे। कर्ज़ा भी बढ़ गया। दीवाला निकाल दिया। फिर अपने गाँव वापिस चले आये।

जहाँ उसका घर था, वहाँ की ज़मीन दो सौ रुपयों में बेचकर, उस धन से वह गाँव में कहीं एक झोपड़ा बना लेना चाहता था और बचे पैसों से दो गौ खरीदकर उनके दूध का व्यापार करना चाहता था। पर उस ज़मीन को दो सौ रुपये देकर भला कौन खरीदता?

किसी ने कान्तिलाल को सलाह दी—"तुम्हारी मदद अगर कोई इस गाँव में कर सकता है, तो पन्नालाल ही कर सकता है। तुम पन्नालाल के पास जाओ और उसके पैर पड़ो कि वह उसे दो सौ रुपयों में खरीद ले। शायद वह खरीद ले।" इसीलिए कान्तिलाल अपने परिवार के साथ आया था।

पाँच बच्चों के साथ, कान्तिलाल को बेसहारा खड़ा देख पन्नालाल को दया आयी। उसके पास उस समय दो सौ रुपये न थे। तो भी उसने मीनाक्षी के गहने गिरवी रखकर, उसकी ज़मीन खरीद ली। कान्तिलाल को घर का इन्तज़ाम करते करते दो तीन दिन लगे। पन्नालाल ने दो तीन दिन उनको अपने ही घर रखा।

घर बनाने के बाद, कान्तिलाल के पास कुछ पैसा बचा। उससे वह गौ खरीद सकता था। पर चूँकि वह मजेदार ज़िन्दगी का आदि था, उसने और उसकी पत्नी से, उस पैसे से अच्छे पकवान बनाकर मजे किये और पन्द्रह ही दिन में सारे पैसे स्वाहा कर दिये। गृहस्थी चलाने की समस्या वैसी की वैसी ही रह गई।

कान्तिलाल फिर पन्नालाल के पास गया—"अगर आपने मुझे सौ रुपये कर्ज दिये, तो दो गौवें खरीदकर मैं दूध का व्यापार शुरू कर दूँगा।"

"मेरे पास कानी कौड़ी नहीं है। तुम्हारी ज़मीन ठीक करके मैं वहाँ शकरकन्दी बोने की सोच रहा हूँ। तुम उस काम में मज़दूरी करो और जो कुछ पैसे उसके बनेंगे मैं दे दूँगा। फसल जब तक नहीं कटेगी, मेरे हाथ पैसा नहीं आयेगा। तब तक मज़दूरी से तुम्हारा भी काम बनता रहेगा।" पन्नालाल ने कहा।

"इतने दिन मैं शहर में रहा हूँ। क्या खेती का काम मेरे बस की बात है? मैं तो फावड़ा पकड़ना भी नहीं जानता। खैर फसल कटने दीजिये, तब तक जैसे तैसे समय काट दूँगा।" कहकर कान्तिलाल चला गया।

वह गाँव में एक व्यापारी की दुकान में मुनीम का काम करने लगा। क्योंकि धोखा देने में वह बड़ा चलता हुआ था, इसलिए जैसे तैसे वह घर में कुछ जमा भी करता जाता था।

पन्नालाल अपनी ज़मीन स्वयं ठीक करने का निश्चय करके फावड़ा, खुरपा लेकर निकला। उस टीले पर जो इधर उधर के पौधे उग आये थे उनको काट दिये। फिर वह फावड़े से खोदने लगा। खोदते खोदते उसे एक जगह एक नागशिला दिखाई दी। उसे उखाड़कर कहीं अच्छी जगह उसकी प्रतिष्ठा करने की वह सोच रहा था कि उसके नीचे उसे एक घड़ा दिखाई दिया। उस घड़े पर ढ़कन लगा हुआ था। जब उसने घड़ा हिलाया, तो किसी चीज़ के खनखनाने की आवाज सुनाई दी।

"कान्तिलाल का भाग्य है। समय पर पैसा मिल गया है।" सोचते सोचते

पन्नालाल ने, उसे ले जाकर, कान्तिलाल को देते हुए कहा—"यह लो, तुम्हारे पूर्वजों ने तुम्हारी जगह यह धन गाड़ रखा था। देख लो कितना है। फिर गौव्वें खरीद लेना।"

कान्तिलाल को पन्नालाल की सद्भावना पर आश्चर्य हुआ। उसने पन्नालाल के सामने ही घड़े का ढ़कन खोलकर देखा। उसमें सौ चान्दी की मुहरें थीं।

उस पैसे से कान्तिलाल ने दो गौवें खरीदीं और उनसे दूध का व्यापार करने लगा। चूँकि कस्बे में दूध के अधिक दाम मिलते थे, इसलिए कान्तिलाल का बड़ा लड़का रोज कस्बे जाता और दूध बेच आता और पैसे लाता। थोड़ा बहुत दूध और दही गाँव में ही बिक जाता था, क्योंकि कान्तिलाल मिलावट में खूब चालाक था इसलिए दूध का व्यापार बड़े फायदे का रहा। गौव्वों के दाने का भी खर्च न था। वे जंगल में चर आती थीं।

पन्नालाल ने एक पीपल के पेड़ के नीचे चबूतरा बनाकर जो नाग शिला उसे मिली थी, उसे वहाँ जड़ा दिया। गाँववाले उसे पूजते, उस पर मनौति करते। उसकी प्रदक्षिणा करते, कभी कभी उसका दूध से अभिषेक करते और सब इसके लिए आवश्यक दूध कान्तिलाल से ही खरीदते।

विनायक चौथी के दिन पन्नालाल अपनी पत्नी और लड़के को लेकर, नाग पर नैवेद्य चढ़ाने निकला। मीनाक्षी ने पकवान साथ लिये। पन्नालाल के लड़के ने लोटे में दूध लिया। परन्तु रास्ते में उसको ठोकर लगी और उसके लोटा का दूध नीचे गिर गिरा गया।

रास्ते में कान्तिलाल का घर पड़ता था। पन्नालाल वहाँ गया। कान्तिलाल से कुशल समाचार जानकर, पन्नालाल ने कहा—"कान्तिलाल हम घर से नाग पूजा के लिए जो दूध लाये थे, वह लुढ़क गया है। थोड़ा-सा दूध तो दो।"

"पन्नालाल जी, दूध को घर से लाने की क्या जरूरत थी? मैं दूध का व्यापार जो कर रहा हूँ। नाग के अभिषेक के लिए सब मेरे यहाँ से दूध खरीदकर ले जाते हैं। आप जैसे लोग खरीदेंगे। तभी ही तो मेरा दूध का व्यापार चलेगा।"

कान्तिलाल की पत्नी ने थोड़ा-सा दूध लाकर लोटे में डाला। अभिषेक के बाद मीनाक्षी प्रसाद के रूप में कान्तिलाल की पत्नी को थोड़े पकवान भी दे आयी।

इसके अगले दिन ही कान्तिलाल के घर एक विचित्र घटना हुई। कान्तिलाल की पत्नी दो गौवों का दूध दुहकर एक बड़े बर्तन में डाल रही थी कि उस में से फुंकराता एक साँप निकला और कहीं चला गया। कान्तिलाल की पत्नी डर गई। वह जोर से चिल्लायी। बच्चे डर गये। कान्तिलाल भी डर गया। उस दिन सारा दूध फेंकना पड़ गया।

शाम को फिर ऐसा ही हुआ। किसी को न मालूम था कि क्यों साँप उस बड़े पात्र में आकर लेट जाता था। पर यह बात सारे गाँव में फैल गई।

फिर जितने मुँह उतनी बातें। कई ने कहा क्योंकि कान्तिलाल दूध में ढ़ेर-सा पानी मिला रहा था इसलिए भगवान उसे यूँ पाठ सिखा रहा था। पर इतने दिन ऐसा क्यों नहीं हुआ, कई ने आपत्ति की।

"नागाभिषेक के लिए जो दूध बेचा जाता है, वह तो निरा पानी है। तभी इस प्रकार हुआ है।" कई ने कहा।

कान्तिलाल की पत्नी ने अपने पति से कहा—"आपने चूँकि पन्नालाल को दूध देकर उनसे पैसा लिया है, इसलिए ही ऐसा हुआ है। तुरत उनका पैसा उनको वापिस कर दो।"

कान्तिलाल ने वैसा ही किया। परन्तु अगले दिन भी दूध के बर्तन में साँप दिखाई दिया। रोज वे दूध दुहते और रोज उसे यूँ फेंकना पड़ जाता।

यह बात पन्नालाल तक भी पहुँची। यह क्यों हो रहा था, यह जानने के लिए पन्नालाल ने बड़े पैमाने पर नाग पूजा और नागोत्सव करवाया। पूजा करनेवाला पूजा के आवेश में आ गया। उसने कहा—"अरे पापी कान्तिलाल मैं तेरा सर्वनाश कर दूँगा। तुम लोगों को पीने के लिए तो पानी मिला दूध बेच ही रहे हो, मेरे अभिषेक के लिए भी वैसा ही दूध बेच रहे हो। तुम्हें जिसने फिर अपने पैरों पर खड़ा किया, जिसने मेरी यहाँ प्रतिष्ठा की, उसको भी तुमने वैसा ही दूध बेचा। मैं तुम्हें माफ़ नहीं करूँगा।"

"मैं लालच में यह सब कर बैठा। मुझे माफ करो, नाग देवता मेरी रक्षा करो।" कहते हुए कान्तिलाल और उसकी पत्नी ने हाथ जोड़े। फिर पूजा करनेवाले का आवेश जाता रहा।

उसके बाद कान्तिलाल को साँपों ने तंग नहीं किया। वह भी अच्छे दूध का व्यापार करने लगा। गाँव में वह ईमानदार समझा जाने लगा।

कृष्णावतार

कुम्भक के यहाँ पैदा हुए भयंकर साँड़ों के बारे में और उनकी दुष्टता के बारे में जब लोगों ने शिकायत की तो मिथिला के राजा ने कुम्भक को बुलाकर कहा—"लोग शिकायत कर रहे हैं कि तुम्हारा साँड़ उन्हें बहुत तंग कर रहा है। तुम होने को तो अच्छे घराने के हो, पर सीधे नहीं हो। तुम्हारे पास इतने आदमी हैं। पाँच सात आदमियों को लेकर उस साँड़ को, जैसे भी हो, काबू में रखो। अगर उसे काबू में नहीं रख सकते हो, तो उसे जंगल में भेज दो।" उसको डाँटा धमका।

कुम्भक को न सूझा कि क्या किया जाय। वह उस भयंकर साँड़ को काबू में नहीं ला सकता था। जब उसने उसको काबू में लाने की कोशिश की, तो बहुत से घायल हुए और एक दो मारे भी गये। जब वह उसे किसी तरह न काबू कर सका, तो उसने घोषणा की कि जो कोई उसे ठीक कर देगा, उसके साथ अपनी लड़की नीला का विवाह कर देगा।

यह घोषणा सुनते ही दूर दूर से गोप युवक भागे भागे आये। उनका ख्याल था कि जो गौवों के बीच रहते थे, उनके लिए एक साँड़ को काबू में लाना बाँयें

६. नीला और कृष्ण का विवाह

हाथ का खेल था। उनको उम्मीद थी कि आसानी से उनको एक अच्छी पत्नी मिल जायेगी।

यूँ आनेवालों ने तरह तरह की शेखियाँ मारीं। एक ने कहा कि साँड़ के सींग मोड़ देगा। एक ने कहा कि उसे पटककर उसके टुकड़े टुकड़े कर देगा। सब दौड़ धूप में, कसरत-कुश्ती में अपना समय बिता रहे थे। सब बड़े जोश में थे। घोषणा करते समय कुम्भक ने नन्द के पास भी आदमी भेजे। उनके बारे में बताते ही नन्द, यशोदा और उनके साथ बलराम और कृष्ण और कई सारे गोपालक निकले।

कुम्भक ने अपनी बहिन और जीजा का स्वागत किया। कुम्भक की पत्नी धर्मदा ने यशोदा की आवभगत की। कुम्भक के लड़के श्रीधाम ने कृष्ण और बलराम का आलिंगन किया, उनके लिए आसन रखा, उनको पकवान, खीर वगैरह, मिष्टान्न परोसे। भोजन के बाद गप्प हुई।

उस दिन रात को राक्षस साँड़ों ने यह जानकर कि कृष्ण और बलराम आये हुए थे, खूब ऊधम मचाया। उन्होंने गौवों को सींगों से मारा। वे कुम्भक के बाड़े में घुस आये और साँड़ों के साथ अपने खुरों से सारी जमीन खोद दी। पेड़ उखाड़ दिये, किवाड़ तोड़ ताड़ दिये। स्त्रियाँ और बच्चे हाहाकार करने लगे। जो गोपालक बाहर से आये थे, वे जहाँ तहाँ छुप छुपा गये।

सवेरा हुआ। कुम्भक ने गोपालकों को बुलवाया। उसने अपनी लड़की का अलंकरण करवाकर उनके समक्ष उपस्थित करके कहा—"गोपकुमारो, देख लिया है

न ये साँड़ कितने भयंकर हैं ! वे शेर की तरह हैं। इनको काबू में रखने की हमने बहुत कोशिश की, पर हम सफल न हुए। यदि हम इनको रास्ते पर न लाये, तो राजा हमें दण्ड देगा। इस काम के लिए ही मैंने तुम जैसे बलवान और समर्थ लोगों को बुलवाया है, तुम में से जो इन पशुओं को काबू में कर लेगा उसके साथ मैं अपनी लड़की का विवाह कर दूँगा।"

गोपकुमार ये बातें सुनकर एक दुविधा में पड़ गये। नीला को देखकर तो वे बड़े उत्साह में थे, पर जब वे साँडों और बछड़ों के बारे में सोचते तो उनका उत्साह ठंडा पड़ जाता। वे भयभीत से हो जाते, इसलिए कोई कोई निश्चय नहीं कर पा रहा था।

तब नन्द के सम्बन्धी घोषवन्त ने कहा—"यदि मैं इन साँड़ों को न मार सका, तो मेरा पराक्रम भला किस काम का ! देखते रहो, मैं एक क्षण में इनका काम तमाम कर दूँगा।" यह कहकर उसने सिंहनाद किया और तैयार होकर उन बैलों के पास गया और बाकी दूर पेड़ों पर चढ़ चढ़ाकर कीलों पर खड़े होकर देखने लगे।
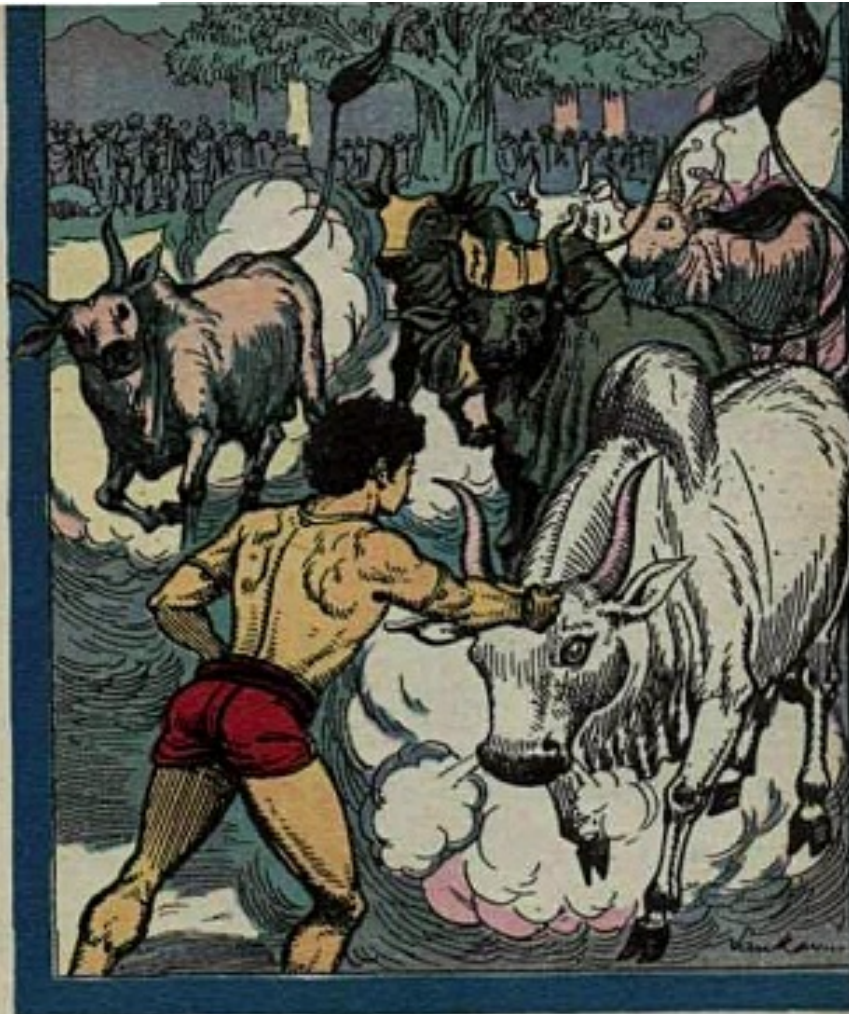
घोषवन्त ने एक साँड़ के माथे पर जोर से मुक्का मारा। देखनेवालों ने तालियाँ बजाईं। तुरत सात साँड़ों ने उसे घेर लिया। कृष्ण ने चिन्तित होकर सोचा। "क्यों इसने यह काम लिया है ? क्या बैल इसे जिन्दा छोड़ेंगे ?" इतने में बैल उसे सींगों से नीचे गिराकर अपने खुरों से कुचलने लगे।

देखनेवालों में हाय हाय मची। इस प्रकार जिन बैलों ने घोषवन्त को गिरा

जो भाई थे एक साथ उसकी ओर लपके। कृष्ण ने जो सांड सामने आया, उसे मारा। उसका सींग पकड़कर एक और सांड पर धकेल दिया। कई की पूँछ पकड़कर चक्की की तरह फेरा। देखनेवालों को यह देख बड़ा आश्चर्य हुआ। यह सब कृष्ण के लिए एक तमाशा-सा था। देखनेवालों के लिए भी। उनमें नीला भी थी। उसे प्रेम से शर्म से अपनी ओर देखता देख कृष्ण खुश हुआ।

आखिर उसने बैलों को रोका। एक एक मुक्के से एक एक बैल को मारा। उनको मुखों से खून की उल्टी करवायी और इस तरह कालनेमि के सातों लड़कों का काम तमाम कर दिया। नन्द और यशोदा ने तुरत कृष्ण का आलिंगन किया। कुम्भक, नीला का हाथ पकड़कर, उसको कृष्ण के पास ले गया। कृष्ण का हाथ उसके हाथ में रखते हुए उसने कहा—"यह लो, तुम अपने पराक्रम का उपहार। अब यह तुम्हारी है। इसे रखो।"

कुम्भक ने कृष्ण को वस्त्र, आभरण यशोदा और नन्द को कपड़े वगैरह और

दिया था, वे बाकी गोपालों की ओर लपके। उन्हें अपने सींगों से मारा। खुरों से मारा। काटा। उनको तितर बितर कर दिया।

तब कृष्ण ने बलराम से कहा—"ये बैल नहीं हैं। बैलों में इतना बल, इतना द्वेष नहीं होता है। कुम्भक की मैं ही सहायता करूँगा।" यह कहकर जब वह बैलों के पास जा रहा था, तो नन्द और यशोदा ने रोका। "नहीं बेटा, उनके पास मत जाओ।"

कृष्ण जब गुस्से में मुट्ठियाँ बाँधकर आ रहा था, तो वे सातों राक्षस सांड़

शेष गोपकुमारों को और उपहार देकर नन्द से कहा—"जीजा, तुम्हारा लड़का उद्दण्ड, प्रचण्ड शूर है। उसकी दया से हम पर से एक भयंकर आपत्ति टल गई है। मेरी प्रतिष्ठा भी बन गई है। हम सब अब आराम से रहेंगे। नीला के लिए मैं हजारों गौवें दूँगा। तुम लेने से मना न करना।"

"अरे पगले, मेरे पास कितनी ही गौवें हैं। कृष्ण के पैदा होने के बाद हमारी गौवों की संख्या बहुत बढ़ गई है। बहुत दूध दे रही हैं और उस दूध से ढ़ेर-सा घी बन रहा है, हम सब खुश हैं, सन्तुष्ट हैं।" नन्द ने कहा।

वह दिन उन्होंने उत्सव के रूप में काटा। नन्द और यशोदा, नीला और श्रीधाम को साथ लेकर कृष्ण और और लोग बृन्दावन गये और वहाँ आराम से रहने लगे। कृष्ण अपने यौवन में प्रवेश कर रहा था। वह पीले रेशम के कपड़े पहिन कर मयूर के पंखों की पगड़ी पहिनकर जंगली फूलों की माला गले में डालकर बाँसुरी बजाता, गौवों को चराता, सारे जंगल में घूमता फिरता।
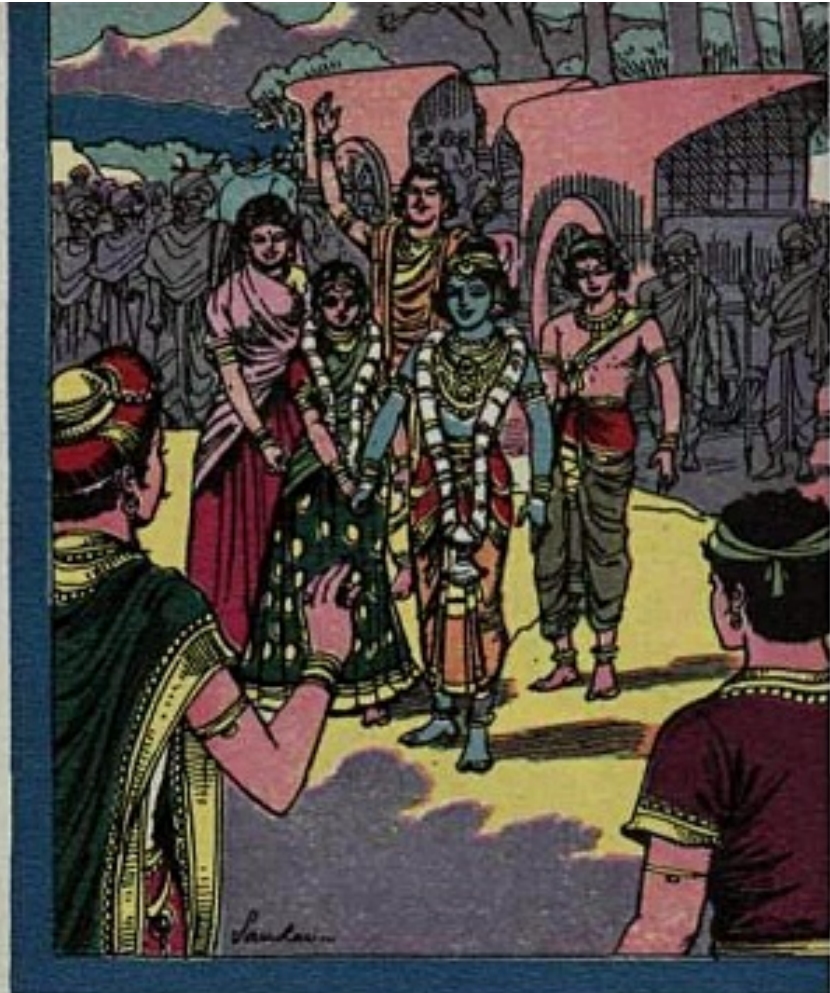
एक दिन बलराम और कृष्ण पशुओं को चराने यमुना नदी के तट पर गये। वहाँ एक बढ़ वृक्ष के नीचे वे बैठे गये। उनके चारों ओर उनकी गौवें चर रही थीं। बाकी गोपालक खेल कूद रहे थे।

उस समय वामदेव और भारद्वाज महामुनि तीर्थ यात्रा पर वहाँ आये। एक बड़े बढ़ के पेड़ को देखकर उन्होंने हाथ जोड़कर उसकी प्रदक्षिणा की। वहाँ गोपालकों से पूछा—"क्यों भाई कोई ऐसा घाट है जहाँ साँप न हों, न मगर ही हों, जहाँ हम स्नान कर सकें?"

गोपालकों ने एक दूसरे का मुँह देखकर कहा—"मुझे नहीं मालूम उससे पूछिये" वे एक दूसरे को दिखाने लगे। यह देख कि वे शरारत कर रहे थे कृष्ण उठा और उसने मुनियों के पास जाकर कहा—"महामुनियो, ये कैसे जाने कि कौन-सा अच्छा घाट है। मैं आपको अच्छा घाट दिखाता हूँ। आपके नित्यकृत्य और अनुष्ठान जब पूरे हो जायें, तो फिर यहाँ आइये। हमारे पास दही भात का खाना है, मीठी खीर भी है। आप आराम से खाइये। नहीं, तो अगर आप चाहेंगे, तो तुरत दूध दुहकर भी दे देंगे। मैं नन्द का लड़का हूँ। मेरा नाम कृष्ण है। यह मेरा भाई है बलराम।"

मुनियों ने कृष्ण के मुख की आभा देखकर सोचा, आश्चर्य किया कि वह गोपालकों में कैसे पैदा हुआ था। उन्होंने कुछ देर आँखें मूँदकर समाधि द्वारा सत्य जान लिया। उन्होंने कृष्ण से कहा—"यह हमारा भाग्य है। ब्रह्मादि को जो दर्शन नहीं मिलता, वह आज हमें मिला है। हमारा जन्म सार्थक हो गया है। वे माता पिता भाग्यशाली हैं, जिनके यहाँ तुमने जन्म लिया है।" इस प्रकार कृष्ण की प्रशंसा करके, वे चले गये।

कृष्ण का जीवन यथापूर्व चलने लगा। वह बलराम और गोपालकों के साथ पशुओं के झुण्ड लेकर, उनको चराते गाते नाचते अपना समय बिताता रहा।

एक दिन वह यमुना के किनारे किनारे बहुत दूर गया। उसे वहाँ एक पोखर दिखाई दिया। वह बहुत बड़ा था। उसमें समुद्र की तरह पानी उफन रहा था। उस पर कोहरा-सा छाया हुआ था। उसके
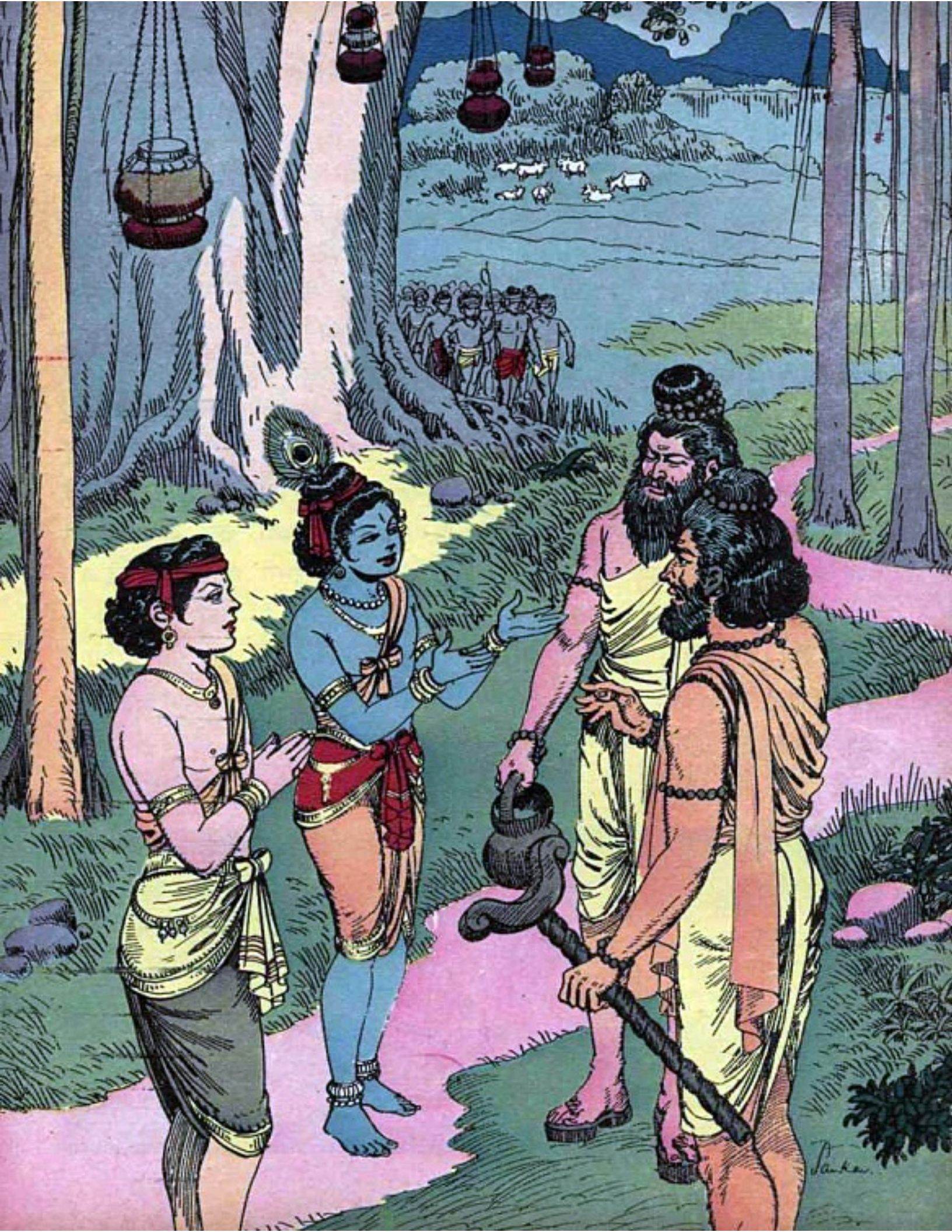
किनारे पेड़ और लतायें थीं। उसकी लहरें किनारे तक जा रही थीं। उस जगह न कोई पशु जीता रहता था न पक्षी ही।

कृष्ण ने पहिले ही सुन रखा था कि उसमें काली नाम का महासर्प रहा करता था, उसके मुख से ज्वालायें निकलती थीं और उसे गरुड़मन्त का भी भय न था। अब जब उसने उस पोखर को देखा, तो उसने सोचा कि वह सब सच ही था। उसने सोचा कि उस पोखर में उतरकर, उस महासर्प के अभिमान को चूर करना होगा और उस पोखर में पशुओं के लिए पानी पीने की सुविधा करने का निश्चय किया, इससे एक और भी लाभ होता। इस काली के परिवार में और असंख्य साँप थे, जो बृन्दावन में जहाँ तहाँ घूमा करते थे और उस प्रदेश को अपने अस्तित्व से भयंकर बना रहे थे। यदि काली को मार दिया गया, तो वे स्थल भी सुरक्षित हो जायेंगे। यह काम कभी न कभी, तो करना ही होगा। क्यों न अभी किया जाये?

यह सोचकर कृष्ण पोखर के पास गया। पानी के किनारे उसने एक जला कदम्ब वृक्ष देखा। कृष्ण ने उस पर चढ़कर, पानी में कूदने की ठानी। उसने किसी से कुछ कहा वहा नहीं। उसने अपने हाथ की रस्सी वगैरह दूर फेंक दी, उसने अपनी वेणु भी किसी और को दे दी। उसने अपने बाल बाँध लिए। धोती कसकर बाँध ली, चप्पल उतारकर कदम्ब वृक्ष पर चढ़कर धड़ाम से पोखर में कूदा। जहाँ वह गिरा, जोर से पानी उठा।

अरण्य पुराण

[९]

काले भैंस एक पहाड़ की तरह ऊँचाई से निचाई की ओर लुढ़कते-से गये। उनके सामने बड़े से बड़ा शेर भी नहीं टिक सकता था। कमजोर भैंसे एक तरफ़ हटा दिये गये थे। वे बेलें तोड़ते नीचे भागे।

भैंसों के भागने की ध्वनि शेरखान को सुनाई दी। शेरखान उठा। भाग निकलने के लिए रास्ता खोजने लगा। चूँकि घाटी के दोनों ओर सीधे पत्थर थे, इसलिए उसे भी ढ़लान की ओर जाना पड़ा। मुकाबला करने की इच्छा शेरखान में बिल्कुल न थी। अगर लड़ना भी पड़ता, तो शेरखान जानता था कि भैंसों की अपेक्षा नर भैंसों से लड़ना अधिक आसान था।

इतने में "राम" के खुरों के नीचे कोई मुलायम-सी चीज़ आई। उसके बाद जो भैंसे आये, उस पर से फिसल भी पड़े।

भैंसे मादा पशुओं के साथ घाटी के नीचे चले आये। मौवली "राम" की पीठ पर से उतर पड़ा और भैंसों को तितर बितर करता हुआ चिल्लाया "अकेला, उनको अलग करो, नहीं तो वे एक दूसरे से जा भिड़ेंगे।" वह "है है" करता पशुओं को शान्त करने लगा।

शेरखान को और कुचलने की ज़रूरत न थी, उसने तभी प्राण छोड़ दिये थे। उसकी लाश के लिए गिद्ध मँडराने लगे थे।

अन्तिम पृष्ठ

फिर घाटी की ओर पशु जाने को थे कि अकेला और "भाई" ने उनको रोका।

"शेरखान कुत्ते की मौत मरा। पर वैसे भी वह लड़ना न जानता था। उसका चमड़ा ले जाकर चबूतरे के ऊपर लटका दिया गया तो मज़ा आयेगा।" यह सोचकर मौवली ने अपने गले से हमेशा लटकनेवाला तेज़ चाकू निकाला।

मनुष्यों में बड़ा हुआ लड़का कभी अकेला शेर का चमड़ा नहीं निकाल सकता। पर मौवली यह काम अच्छी तरह कर सकता था। दोनों भेड़ियों ने चमड़ा पकड़कर उसकी मदद की। मौवली एक घंटे तक शेर का चमड़ा निकालता रहा।

इतने में किसी का हाथ उसके कन्धे पर पड़ा। जब उसने सिर उठाकर देखा, तो बन्दूक लिए बलदेव खड़ा था। चरवाहे लड़कों ने उसको खबर दे दी थी, पशुओं को चराने में ढील दिखाने के लिए उसे डाँटने के लिए बलदेव चला आया था। मनुष्य को आता देख, भेड़िये चुपचाप वहाँ से खिसक गये।

"तुम्हारी अक़्ल तो नहीं मारी गई है? क्या अकेले शेर का चमड़ा निकाल सकोगे? भैंसों ने इसे कहाँ मारा था? यही लंगड़ा शेर है न? इसको मारनेवाले को सौ रुपया ईनाम भी दिया जायेगा। जब मैं इसे दिखाकर सौ रुपये ईनाम लाऊँगा, तो उसमें से एक रुपया तुम्हें भी दूँगा। पशुओं को तूने भगाया ज़रूर है, परन्तु इस बार तुम्हें माफ़ कर देता हूँ।" बलदेव ने कहा।

मौवली चमड़ा काटते काटते ही गुनगुनाया—"ऐसी बात है? तुम चमड़े को ले जाकर सौ रुपये लोगे और उसमें से एक रुपया मुझे दोगे, पर मुझे इस चमड़े से एक और काम है।"

शेर के मरते ही, ताकि उसकी आत्मा उनको तंग न करे, शिकारी उसकी मूँछें अक्सर जला देते हैं। बलदेव ने जब उसकी मूँछें जलानी चाहीं, तो मौवली ने उसे रोका।

बलदेव ने गुस्से में कहा—"जानते हो मैं कौन हूँ? मैं गाँव का बड़ा शिकारी हूँ। मैं तुम्हें ईनाम में एक आना भी न दूँगा। ऊपर से खूब पिटवाऊँगा भी। पहिले शेर को छोड़कर इधर आओ।"

"और इससे मुझे क्या काम है ! अकेला देखो, यह आदमी मुझे तंग कर रहा है।" मौवली चिल्लाया। अभी उसका चमड़ा निकालने का काम खतम न हुआ था। अगले क्षण बलदेव जमीन पर औंधे गिरा हुआ था। एक भेड़िया उस पर खड़ा था। मौवली अपने काम में लगा हुआ था, उसने दान्त पीसते हुए कहा—"बलदेव, जो तुमने कहा था, वह ठीक है। तुमसे मुझे एक आना भी न मिलेगा। इस शेर से मेरी पुरानी अनबन है। आज मैंने अपना बदला ले लिया है।"

दस साल पहिले बलदेव अकेला के सामने शायद इस तरह काबू में न आता। यही नहीं ! जो शेर से बदला निकालने के लिए उतारु हो रहा हो, उसकी मदद करनेवाले भेड़ियों का मुकाबला कैसे किया जाय, वह न जानता था।

"महाराज, मेरी उम्र ढ़ल गई है। आपको मामूली गड़रिया समझना गलती ही है। मैं उठकर चला जाता हूँ। आपके नौकर मुझे चीरेंगे फाड़ेंगे तो नहीं।" बलदेव ने कहा।

"जाओ, फिर कभी मेरे शिकार में दखल न देना। उसे जाने दो अकेला।" मौवली ने कहा।

बलदेव उठकर जल्द से जल्द गाँव पहुँचा। वह यूँ मुड़ मुड़कर देखता गया, जैसे मौवली भूत न बन जाये, उसने गाँव में जाकर भूतों के कारनामें सुनाये, तो पुजारी निश्चेष्ट रह गया। चमड़ा निकालने का काम पूरा होते होते अन्धेरा हो गया। (अभी है)

६३. नियागरा—अमेरिकन जलप्रपात

नियागरा (जलगर्जन) जलप्रपात अमेरिका और केनाडा के सीमाओं पर है। ये वस्तुतः दो जलप्रपात हैं। जो केनाडा में है उसे "होर्सशू" (घोड़े की नाल) कहते हैं। इस चित्र में अमेरिकन जलप्रपात है। इसकी चौड़ाई १,००० फीट है और ऊँचाई १६७ फीट।